हिन्दी साहित्य कला परिषद्, पोर्टब्लेयर का प्रकाशन

द्वीप लहरी

अंक 58

जुलाई-दिसम्बर-2018

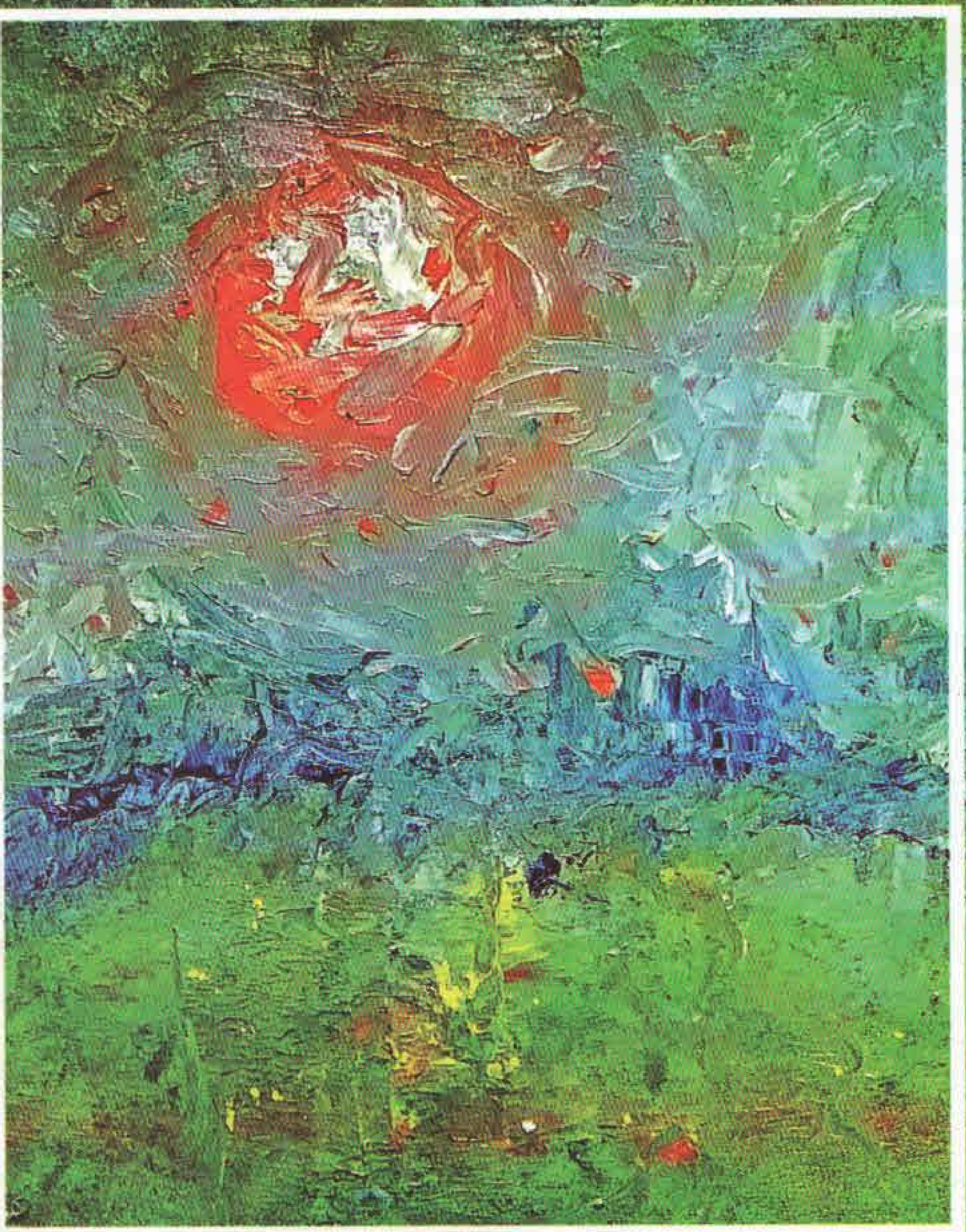

व्यंग्य बहुल अंक

साथ में

लघुकथाएँ, कहानियाँ व कविताएँ

चित्रकार व अभिनेता
अजय रोहिल्ला

वर्ष 28

द्वीप लहरी

अंक 58

जुलाई-दिसम्बर 2018

हिन्दी साहित्य कला परिषद्, पोर्टब्लेयर का प्रकाशन

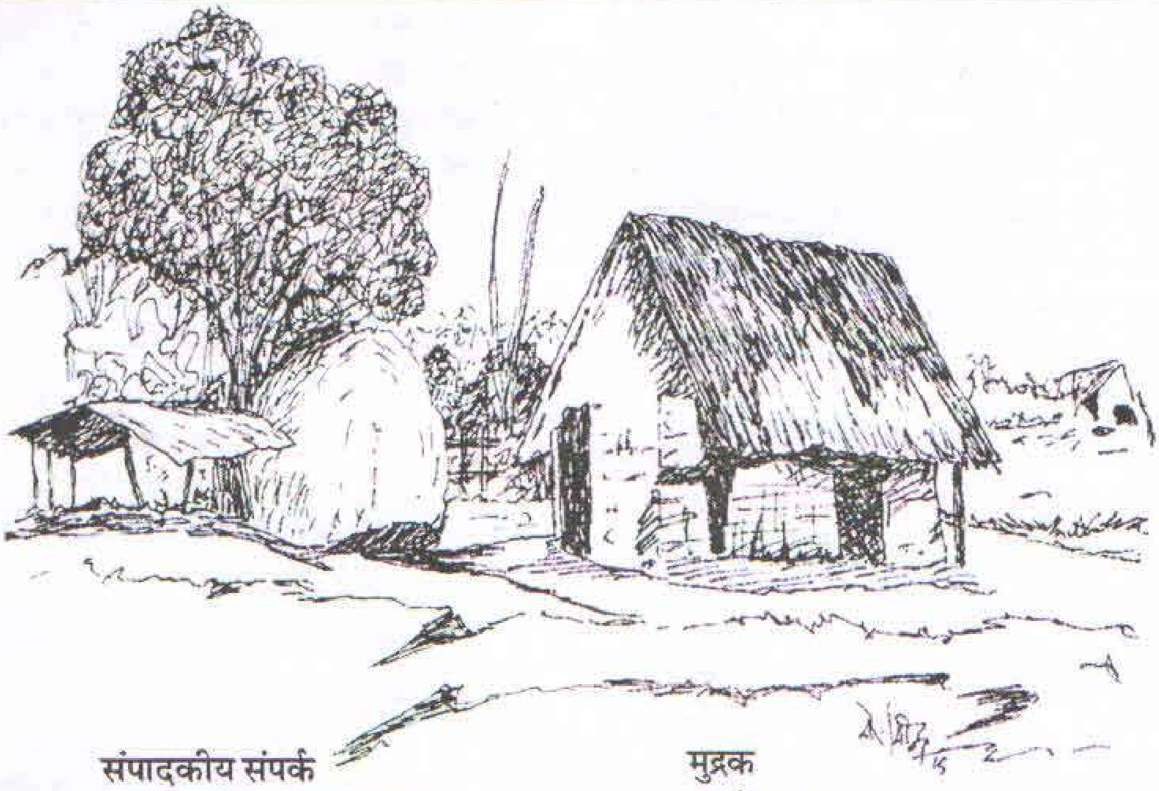

संरक्षक
श्री जगदीश मिश्र
श्री आर. पी. सिंह
डॉ. घनश्याम पाण्डेय

प्रबंध संपादक
श्री जगदीश नारायण राय
श्री अवधेश गिरि
श्री जे. बी. शर्मा

संपादक
डॉ. व्यास मणि त्रिपाठी

संपादन सहयोग
डॉ. बलराम अग्रवाल

संपादक मंडल
श्री जे. पी. शुक्ल
डॉ. रामकृपाल तिवारी
श्री विवेक मिश्र
श्रीमती रागिनी राय
श्री बृजेश कुमार पाण्डेय
श्री सत्येन्द्र दुबे
श्री रवि शंकर पाण्डेय
श्री राम सकल कुशवाहा

संपादकीय संपर्क
हिन्दी साहित्य कला परिषद्
अण्डमान-निकोबार द्वीप समूह
पोर्टब्लेयर-744101
दूरभाष: 03192-233449, 232241
Email: hskp1962portblair@gmail.com

मुद्रक
साक्षी प्रकाशन
एस-16, नवीन शाहदरा
दिल्ली-110032
दूरभाष : 011-22324833
Email: goelbooks@rediffmail.com

हिन्दी साहित्य, कला एवं संस्कृति के प्रसारार्थ निःशुल्क वितरण हेतु

आवरण : अजय रोहिल्ला, मुंबई   **भीतरी रेखांकन :** के. रवीन्द्र, रायगढ़; अनुप्रिया, दिल्ली

पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में वर्णित विचार सम्बन्धित लेखकों के निजी हैं। उनके लिए रचनाकार स्वयं उत्तरदायी हैं। पत्रिका का सम्पादन/संचालन एवं प्रबन्धन आदि पूर्णतः अवैतनिक एवं अव्यावसायिक है। सभी प्रकार के न्यायिक विवादों का निपटान-क्षेत्र पोर्ट ब्लेयर होगा।

अनुक्रम

संपादकीय 3

व्यंग्य बहुल खण्ड

हिंदी साहित्य के कटियाबाज —अरविंद तिवारी 4
सत्ता का बत्ता उर्फ़ बधियाकरण —अशोक गुजराती 5
थैंक्स, हे लव काउंसलर! —अशोक गौतम 6
लोकल विद्वान —अशोक भाटिया 8
सत्यव्रत —दिलीप तेतरबे 10
यह भी ठीक, वह भी ठीक —प्रेम जनमेजय 16
हम समुद्र को बचाना चाहते हैं —ब्रजेश कानूनगो 18
हैकर्स/टैगर्स/हैंगर्स —मीना अरोड़ा 19
पांडेय जी बन गए लेखक —लालित्य ललित 20
एक शॉर्ट-सर्किट हमारे दफ़्तर में भी!—श्रवण कुमार उर्मलिया 23
चार लघु-व्यंग्य —संतोष त्रिवेदी 25
कबूतर की घर वापिसी —सुभाष चन्दर 27
दो हाफ लाइनर — हरीश नवल 30

लघुकथा

चार लघुकथाएँ —बलराम अग्रवाल 31
गरीब की पूजा —सुरेश सौरभ 33
प्रसन्नता —विभा रश्मि 33
रुक सत्तो! —शोभना श्याम 34
कंधा —प्रभात दुबे 34
पाँच लघुकथाएँ —विजय 35
मनौती —सतीश राठी 37
दो बूँदें —वीरेन्द्र कुमार भारद्वाज 37
अधूरा खत —स्नेह गोस्वामी 37
लावारिस —शराफत अली खान 38
मोह के धागे —छवि निगम 38

कहानी

शादी की साल गिरह —जगदीश नारायण राय 39
कहीं देर न हो जाए —डॉ. पूरनसिंह 41
गुब्बारे —रश्मि पदवाड़ मदनकर 42

कविता/गीत/ग़ज़ल

दो ग़ज़लें—**डॉ. नरेश**/43, ग़ज़ल —**रिदा खान**/43, **आशीष कंधवे** की कविताएँ/44, नमन उस मंच को—**अशोक कुमार श्रीवास्तव**/46, शीश झुकाओ ससम्मान—**सुविधा पंडित**/46, पहचान—**डॉ. मंजू नायर**/47, शाश्वत है आत्मा... —**ऋता शुक्ल**/47, कलियुग में—**रितेश सिंह 'राही'**/48, शहीदों को नमन—**पं. बृजेश तिवारी**/48, नेता एक सुभाष था—**डी.एम. सावित्री**/49, स्वप्न आँजी आँख—**पं. गिरिमोहन गुरु**/50, जरूरतें अभी कम करना है—**शिवकुमार दुबे**/50, जेठ दुपहरी—**अशोक 'आनन'**/51, नन्हीं चिड़िया—**डॉ. रामनिवास 'मानव'**/51, पानी : एक मिथक—**डॉ. स्नेहलता श्रीवास्तव**/52, **डॉ. सुरेश उजाला** की कविताएँ/53, नववर्ष की नव बेला में—**बद्री लाल मेहरा 'दिव्य'**/53, **डॉ. जयसिंह अलवरी** की रचनाएँ/54, मेरे घर आई एक नन्ही परी—**अनीता प्रभाकर**/55

बाल साहित्य

साहसी बालक : राजू —जे.बी. शर्मा 56

बाल नौटंकी

चतुराई का न्याय
(लोककथा पर आधारित) —रजनीकान्त शुक्ल 58

परिषद के अद्यतन प्रकाशन

द्वीप लहरी-हिन्दी साहित्य कला परिषद् की अर्द्धवार्षिक पत्रिका,जाग उठे गीत-कविता संग्रह— ईश्वरी प्रसाद गौड़, समय के पाखी-कविता संग्रह— ईश्वरी प्रसाद गौड़, गीत-अगीत-कविता संग्रह— ईश्वरी प्रसाद गौड़, शादी कर पछतानी-कविता संग्रह— ईश्वरी प्रसाद गौड़, अण्डमान के हिन्दी कवि-कविता संग्रह— सं. सुरेशनन्दन प्रसाद सिंह ''नीलकंठ'' अण्डमान के हिन्दी कहानीकार-सं. डॉ. व्यास मणि त्रिपाठी, अण्डमान तथा निकोबार के आदिवासी और उनकी बोली— डॉ. व्यास मणि त्रिपाठी, अण्डमान निकोबार की लोक कथाएँ-लीलाधर मण्डलोई-जे. एस. राज, अण्डमान के हिन्दीतर कहानीकार-कहानी संग्रह— डॉ. गोविन्द सिंह पँवार, आँखों देखा अण्डमान-संस्मरणात्मक निबन्ध— डॉ. ब्रह्मस्वरूप शर्मा, खामोशी-कहानी संग्रह— डी. एम. सावित्री, रामचन्द्रिका में नाट्य तत्त्व— डॉ. व्यास मणि त्रिपाठी, द्वीपायन-कविता संग्रह— जगदीश नारायण राय, अण्डमान की हिन्दी कविता— डॉ. व्यास मणि त्रिपाठी, माटी की महक-कहानी संग्रह— जयबहादुर शर्मा, अण्डमान की हिन्दी कहानियाँ— सं. डॉ. व्यास मणि त्रिपाठी, हजारी प्रसाद द्विवेदी, व्यक्तित्व एवं कृतित्व— सं. डॉ. व्यास मणि त्रिपाठी, महादेवी वर्मा, व्यक्तित्व एवं कृतित्व— सं. डॉ. व्यास मणि त्रिपाठी, सृजन और समीक्षा— डॉ. व्यास मणि त्रिपाठी, रामधारी सिंह 'दिनकर'—सृष्टि एवं दृष्टि— सं. डॉ. व्यास मणि त्रिपाठी, अज्ञेय-चिंतन एवं सृजन— सं. डॉ. व्यास मणि त्रिपाठी, नागार्जुन-लोक संवेदना के यथार्थ सर्जक— सं. डॉ. व्यास मणि त्रिपाठी, माटी मेरे देश की-कविता संग्रह— जयबहादुर शर्मा,अण्डमान के स्त्री स्वर (काव्य संग्रह) सं. डी. एम. सावित्री, प्रयास-काव्य संग्रह—दुर्गा विजय सिंह 'दीप'।

संपादकीय

आज जीवन में सिद्धि पाने के लिए लघुमार्ग अपनाना मजबूरी कम फैशन अधिक है। सिद्धि साधना की अपेक्षा रखती है लेकिन हम साधना के बिना ही सब कुछ पा जाने की हड़बड़ी में हैं और इसीलिए लघु से लघु मार्ग की तलाश में रहते हैं। माता-पिता भी अपनी सन्तानों को साधना की प्रेरणा कम सिद्धि पाने के सरल उपायों का ही मन्त्र पढ़ाने में लगे हैं। परीक्षा हो या जीवन का रण-क्षेत्र कम परिश्रम और अधिक प्राप्ति का नुस्खा ही इन दिनों अधिक प्रचलन में है। यही कारण है कि आचार-व्यवहार से लेकर कर्म-क्षेत्र के हर कोने तक लघुमार्ग अपनाने की प्रवृत्ति निरन्तर बढ़ रही है। इसके लाभ हो सकते हैं; लेकिन हानियाँ भी कम नहीं हैं। आज हानियों की चर्चा करने वाले भी नहीं हैं। बचपन में हमारी दादी लघु मार्ग की हानियों को कथा-कहानियों के माध्यम से बताया करती थीं। वे अक्सर दो रास्तों का उल्लेख करतीं एक छोटा और एक लम्बा। फिर उन दोनों के गुण-दोषों की चर्चा करतीं और निष्कर्ष रूप में लम्बा रास्ता अपनाने पर जोर देतीं। उन दिनों जीवन में लम्बा रास्ता अपनाने की जरूरत थी भी; क्योंकि परिवार संयुक्त हुआ करते थे। सभी के सुख-दुख में सहभागिता के लिए धैर्य और साहस की जरूरत होती थी। त्याग और तपस्या को महत्त्व प्राप्त था। आचरण की शुचिता पर जोर दिया जाता था। आदर्श पथ सेवा और समर्पण की माँग करता था। यह सब कुछ लघुमार्ग से सम्भव नहीं था। आज न तो संयुक्त परिवार हैं और न ही उस अवधारणा की मूर्तता का संकल्प विधान। 'हम दो और हमारे दो' तक केन्द्रित और कभी-कभी सिर्फ 'हम दो' तक ही सीमित परिवारों में वृद्ध माता-पिता के लिए कोई स्थान नहीं होने की प्रवृत्ति का निरन्तर विकास भी जीवन में लघुमार्ग अपनाने से ही संभव हुआ है। युवा-पीढ़ी में विवाह की जिम्मेदारी उठाने से भागने की प्रवृत्ति भी विकसित हो रही है जो कहीं-न-कहीं जीवन में लघुमार्ग अपनाने का ही दुष्परिणाम है।

इन दिनों हर जगह 'मी टू' की चर्चा है। माना कि शोषण की शिकार स्त्रियों को मुखरित होने के लिए यह एक बिल्कुल नया और अपने ढंग का एक अनूठा मंच है। उन्हें अपनी आवाज बुलन्द करनी ही चाहिए। शोषण चाहे जिस भी प्रकार का हो, जिस रूप में भी हो, वह अक्षम्य है और उसका प्रतिकार होना चाहिए। शोषित महिलाओं ने बीस वर्ष, तीस वर्ष बाद ही सही अपने पर हुए अत्याचारों का खुलासा किया, इसके लिए वे प्रशंसा की पात्र हैं; लेकिन इतने वर्ष तक उनकी चुप्पी क्या अखरती नहीं है? क्या मन में यह सवाल नहीं पैदा होता कि कहीं-न-कहीं वह सब भी जीवन में सिद्धि पाने के लिए एक लघुमार्ग ही था। आज न जाने कितनी ही किशोरियाँ चकाचौंध और जगर-मगर की दुनिया में प्रवेश पाने के लिए आतुर और लालायित हैं। कितनी ऐसी हैं जिन्होंने लघुमार्ग अपनाकर उसमें प्रवेश पा भी लिया है और कितनी ऐसी हैं जो उस दुनिया से बाहर निकलने के लिए छटपटा भी रही हैं। उससे बाहर न ही निकल पाने की स्थिति में कितनों ने अपना जीवन समाप्त भी किया है। जाहिर है, लघुमार्ग येन-केन प्रकारेण सिद्धि तो प्रदान कर देता है लेकिन उसे पा लेने के बाद उसकी संरक्षा हेतु वह बल, साहस धैर्य और विवेक नहीं देता जो एक लम्बी यात्रा में अनिवार्य रूप से शामिल रहता है।

साहित्य की दुनिया में भी लघुमार्ग अपनाने वालों की कमी नहीं है। इस अचूक साधन का भरपूर प्रयोग पद-प्रतिष्ठा और सम्मान पाने के लिए हो रहा है। साधन और साध्य के बीच शुद्धता के लिए कोई अवकाश भी नहीं रह गया है। हड़बड़ी इतनी है कि कुछ भी लिखकर और कुछ भी छपवाकर 'साहित्य-सम्राट' कहलाने की होड़ लगी हुई है। इधर कुछ लोग 'राष्ट्रकवि' की उपाधि धारण कर अपने फेसबुकिया मित्रों को चिढ़ाने के प्रयत्नों में लीन हैं। अब कोई उनसे पूछे कि हे राष्ट्रकवि! आपकी कविता में राष्ट्रीय चेतना कितनी है? आपकी कविता जनता जनार्दन से किस रूप में तादात्म्य स्थापित करती है? किस रूप में वह जनता की वाणी बनी है? उसके पाठक कितने हैं? किस तरह की प्रभावात्मकता है? इनका खुलासा कीजिए और यह भी बताइए कि क्या आपकी कविता में गुप्त जी की सांस्कृतिक चेतना और राष्ट्रीय अस्मिता, दिनकर की ओज और पौरुषमयी वाणी, सोहनलाल द्विवेदी की भारतीयता का कोई विधान है; अथवा वैसे ही उनकी पंक्ति में बैठने की इच्छा जागृत हुई और धन देकर 'राष्ट्रकवि' बन गए। आज बाजार में तरह-तरह की, किसिम-किसिम की उपाधियाँ है, रंग-बिरंगे अलंकरण हैं। पैसा खर्च कीजिए, बाजार आपकी कीमत के अनुसार आपको उपाधियों से सजा देगा। उसे लेकर इतराइये, झूमिये, गाइये और हाँ! फेसबुक, वाट्सअप, ट्विटर आदि पर जरूर डालिये, ताकि लोग उसे पसन्द कर सकें, बधाई और शुभकामना सन्देश प्रेषित कर सकें। आप अपना सीना फुलाइये, अभिमान में तनिये; लेकिन लोगों को मालूम है कि वह सब कुछ आपके 'लघुमार्ग' की देन है।

प्रिय पाठको/लेखको, हमें मालूम है कि आप लघुमार्ग के पथिक नहीं बल्कि एक सच्चे साहित्य-साधक हैं और इसलिए आप से अनुरोध है कि अपना लेखकीय सहयोग हमें दें ताकि 'द्वीप लहरी' की साधना चलती रहे। नव वर्ष की बधाई एवं शुभकामनाएँ।

—व्यास मणि त्रिपाठी

हिंदी साहित्य के कटियाबाज

अरविंद तिवारी

हिंदी साहित्य में बड़ा लोचा है। झोल हैं, झूलते हुए तार हैं। इन बिजली के तारों पर कटिया डाले हुए कुछ प्रतिभाहीन साहित्यकार हैं! ये साहित्यकार दिल्ली से लेकर पटना, लखनऊ, रांची, जयपुर तक कटिया डाले पड़े हैं। मुफ़्त के बिजलीखोरों का साहित्य से ज़्यादा लेना-देना नहीं है, उसके लिए मीटर वाले साहित्यकार बहुतेरे हैं। पाठकों के अभावों से जूझती हिंदी में इन अवैध कनेक्शनों को पकड़ने की कवायद कभी नहीं होती। इन कटियाबाजों से हिंदी समृद्ध भले ही न हो रही हो, पर ज़्यादा नुकसान भी नहीं होता, क्योंकि इन्हें तो हिंदी के नाम पर सुविधाएँ खींचनी हैं। कहाँ साहित्य के शिविर हैं, कहाँ कार्यशाला है, इनका नाम हर किसी ने उछाला है। ज़िंदगी में कुछ लिखा ही नहीं, और जो लिखा है वह कूड़ा-कबाड़ा है। मगर साहित्य की तलाकशुदा विधाएँ हलाला के लिए इन्हीं की चौखट पर आती हैं! कोई पत्रकार है तो कोई बड़े साहित्यकार का हमप्याला यार है। कोई जेबी रिसाला निकाल रहा है, तो कोई साहित्यिक संगठन सँभाल रहा है। इनके ताल्लुक साहित्य से लेकर सत्ता तक हैं, इसलिए ये खूब मस्त हैं। अपने प्रदेश की राजधानी की हर संस्था में इनकी टांग फँसी है। जिस विधा में ये लिखते रहे, उसमें न लिखते तो विधा को छानने-फटकने की ज़रूरत ही नहीं पड़ती! विधा का अनाज इन्हीं की गंदगी के कारण धोना पड़ता है, वरना सीधे चक्की पर जा सकता था। ये जानते हैं, इन्हें कोई बड़ा पुरस्कार मिलना नहीं है, सो उस तरह की राजनीति करते भी नहीं, पर साहित्य के नाम पर मिलने वाली कोई सुविधा भी नहीं छोड़ते। कथा-कहानी, कविता, व्यंग्य, नाटक आदि के नाम पर खोमचा लगाने वाले ये हिंदी सेवक सिर्फ टाइम पास करने के लिए अपने खोमचे पर बैठते हैं। खोमचे में माल-वाल कुछ नहीं है, पर साहित्य का शार्ट कट इन्हीं के खोमचे से गुजरता है!

इनके खोमचे पर नकली नोट ही नहीं, नकली समाजसेवा की बोरियाँ भी रखी हुई हैं। दिल्ली की संस्था का बन्दा इन्हें पूरा भारत घुमाता है तो कोलकाता वाला भी इन्हें बुलाता है। जहाँ साहित्य काम नहीं आता वहाँ ये समाजसेवा की तुरुप का पत्ता छोड़ देते हैं! किसी न किसी तरह इन्हें सम्मान मिल ही जाता है। जिस विधा का इन्हें क ख भी नहीं आता, उसी विधा के पुरस्कार हेतु ये जज बन जाते हैं। पुरस्कार से बड़ा जज होता है, यह बात इनके ज़ेहन में है। ले भाई! तूने हमें दिल्ली, पटना, भोपाल बुलाया और अध्यक्ष मण्डल में बैठाया था, सो हमने धांसू साहित्यकार को रगड़कर तुझे पुरस्कृत करवा दिया। जैसे हिंदी में कोई बिना पी एच डी, डी लिट् हो जाता है, उसी तरह ये बिना पुरस्कृत हुए पुरस्कार के जज बन जाते हैं। हमारी हिंदी सचमुच महान है क्योंकि इसी में शॉर्टकट विद्यमान है। गैस पेपर पढ़ो और नब्बे प्रतिशत अंक ले आओ! समूचा वाङ्मय पढ़ने की ज़रूरत ही नहीं है। इन गंजों पर हिंदी की विग खूब फबती है! लगता ही नहीं कि बाल नकली हैं। इनके लेखन का प्रस्थान-बिंदु कट पेस्ट होता है!

वैसे इनके बिना भी हिंदी में नकली आइटमों की भरमार है। सोशल मीडिया पर चोरी की घटनाएँ आम हो गई हैं। हिंदी जगत इनसे आहत है, पर राहत इतनी है कि ये पकड़ में आ जाती हैं। सबसे ज़्यादा नकली माल समीक्षा के बाज़ार में आ रहा है। इस आइटम की कोई गारंटी नहीं है, पर जब तक चलता है, ज़ोरदार तरीके से चलता है। पर धीरे-धीरे यह दीगर चाइनीज आइटमों की तरह बेकार हो जाती है। समीक्षा के शब्दों का मुलम्मा उखड़ जाता है। फिर जो वास्तविकता सामने आती है, वह लेखक को गुमनामी के अंधेरे में धकेल देती है। कविता, कहानी, व्यंग्य हर दुकान चाइनीज़ टाइप के आइटमों से भरी पड़ी है। कटियाबाजों की बाज़ार पर इस कदर पकड़ होती है कि वे इन नकली आइटमों को एक के साथ एक फ्री योजना में बेच देते हैं। दरअसल ये कटियाबाज मूलतः बाज़ार के एजेंट ही हैं।

इन कटियाबाजों की जब किताब आती है, तो उसे प्रूफ रीडर भी नहीं पढ़ पाता। पर प्रूफ की गलतियों से इन कटियाबाजों पर कोई असर नहीं पड़ता। सभी पुस्तकें बारास्ता उपहार, रद्दी वाले के यहाँ पहुँच जाती हैं। रद्दी वाला इन्हें अख़बार की रद्दी से कम दामों में खरीद लेता है। कटियाबाज इससे आहत नहीं होते क्योंकि कई नामधारी हिंदी लेखकों की पुस्तकों का यही हश्र होता है!

शेष पृष्ठ 17 पर...

सत्ता का बत्ता उर्फ़ बधियाकरण

अशोक गुजराती

मैं गया तो वे उदास बैठे हुए थे। वे हमारे क्षेत्र के विधान सभा सदस्य हैं। फिर भी निराश ?... मैंने उनसे उनके इस अवसाद का कारण जानना चाहा। पहले तो वे टालते रहे लेकिन मेरे बारहा प्रयासों के सम्मुख अंततः झुक ही गये।

गंभीरता के आवरण को भेदने में असमर्थ उनका बुझा-बुझा उत्तर मुझे चिन्तित कर रहा था– 'क्या बताऊँ दोस्त ! मेरे बेटे का एक लड़की से कुछ-कुछ चल रहा था। वह ज़िद पर उतर आया कि शादी करेगा तो उसीसे। वह काफी पढ़े-लिखे सुसंस्कृत त्रिवेदी परिवार की बेटी है और उसके पिता सेवा-निवृत्त न्यायाधीश। मैं भी ऐसा गया-बीता नहीं। मैंने उसके पिता को फोन लगाया और इस रिश्ते के लिए उनकी सहमति लेनी चाही। उनके सवाल-दर-सवाल सुनकर लगा ज्यों मैं किसी पत्रकार सम्मेलन में बैठा हूँ...

उन्होंने पूछा, 'आपको मैं बख़ूबी जानता हूँ, पर ये बताइए कि आप कभी तिहाड़ जेल में बंद हुए हैं... ?'

मैंने सकुचाते हुए जवाब दिया– 'नहीं तो ! मैं पूरी तरह से अण्णा का अनुयायी हूँ...'

वे तुरंत बोले, 'वे भी तो अन्दर थे। ख़ैर ! आपके प्रतिष्ठान, कार्यालय अथवा घर पर कभी आयकर का छापा पड़ा है ?'

मैं- 'ऐसा तो कभी नहीं हुआ।'

वे- 'चलिए, पिछले तीन सालों में, जब से आप चुनकर आये हैं, आपकी संपत्ति में कितनी बढ़ोतरी हुई है ?'

मैं- 'बढ़ोतरी ! अरे भाई, मैं ए.के. एंटोनी के पद-चिन्हों पर चलने में विश्वास रखता हूँ।'

वे- 'छोड़िए, आपके पद का फायदा उठाकर आपके बेटे ने कभी न कभी गुंडागर्दी, हत्या, बलात्कार, हेराफेरी–कोई तो पावन कार्य किया ही होगा ?'

मैं- 'आप हद से आगे बढ़ रहे हैं। मेरा बेटा मुझ-सा ही ज़हीन और उच्च शिक्षित है।'

वे- 'फिर आपने विधायक बनने के पश्चात कोई घोटाला- टू जी, सीडब्लूजी या कोलगेट जैसा-निश्चित ही किया होगा ?'

मैं- 'आप क्या बकवास कर रहे हैं...'

और मैंने चिढ़कर मोबाइल बंद कर दिया–'विधायक जी ने समापन किया।

मैंने विधायक जी का सारा बयान ध्यानपूर्वक सुना, जैसे कोई भी चमचा करता रहता है। मैंने उनके निष्पाप जीवन के समर्थन में अपनी गर्दन बार-बार हिलायी क्योंकि मेरे पास मेरे पूर्वजों की तरह पूंछ जो नहीं थी। तत्पश्चात मैंने काफी सोच-समझकर उनके संभावित अगले कदम के विषय में तहकीकात कर लेना अपना कर्तव्य जान उनसे पूछ ही लिया– 'अब क्या करेंगे, विधायक जी... ये समझो कि यह लड़की तो गयी हाथ से। उसके पिता न्यायाधीश रहे हैं। स्वाभाविक है कि सेवा-निवृत्त होने के बावजूद वे पूरी न्यायिक जांच-पड़ताल के बिना मानेंगे नहीं...'

'तो कर ले न्यायिक जांच-पड़ताल। मेरे ख़िलाफ अब तक न कोई अदालती कार्रवाई हुई है, न मुझ पर कोई आरोप लगा है।' विधायक जी ने भरपूर जोश के साथ अपने असली तेवर दिखाये।

मैंने भी उसी लहज़े में उत्तर दिया– 'आप बिलकुल दुरुस्त हैं, सर लेकिन ऐसे शंकालु व्यक्ति को सबक सिखाना भी आवश्यक है... फिर बेटे के हठ का भी ख़याल रखना पड़ेगा...'

विधायक जी बोले, 'एकदम सही कह रहे हैं आप. मैंने भी कोई कच्ची गोलियाँ नहीं खेली हैं। आप देखते जाइए, मैं उसे कैसे लाइन पर लाता हूँ. यदि वह खुद मेरे पास लड़की का रिश्ता लेकर नहीं आया तो अपनी मूंछें मुंडवा दूँगा, हँ !'

फिर हुआ यह कि हमारे सम्मानित जज साहब के बंगले पर तीसरे ही दिन आयकर वालों ने पुलिस की मदद से छापा मार दिया। अख़बारों में ही नहीं टीवी पर भी उनकी खूब छिछालेदार हुई। बेचारे जज साहब बताते नहीं थक रहे थे कि उन्होंने ज़िन्दगी में कभी भ्रष्टाचार नहीं किया, जो उनके पास है वह कुछ उत्तराधिकार और कुछ उनके वेतन से ही अर्जित है।

उन पर कोर्ट में केस दायर हो गया। नतीज़ा, चाहे उनके पक्ष में निकले, एक लम्बा अर्सा लेगा ही लेगा।

अब विधायक जी की बारी थी। उन्होंने जज साहब को फोन लगाया। हैलो, वैलो की औपचारिकता के अनंतर सख्त

शेष पृष्ठ 7 पर....

थैंक्स, हे लव काउंसलर!

अशोक गौतम

हे प्रिय! मैंने पिछले दिनों जिंदगी की भाग-दौड़ के बाद भी जो तुमसे प्रेम यह जानते हुए भी किया कि आज की तारीख में इश्क एलपीजी के तंदूर पर रखा वह तवा है जिस पर जो भी जीव एक बार भी कूदता है तो उम्रभर वह जलते जलते तवे पर पड़े चिकन की तरह आँखें मूँद कर भुनता रहता है, मद्धम मद्धम आंच में। न कहीं चूँ न कहीं चां।

अब प्रेम के बाद दूसरी परेशानी यह आ खड़ी हो हुई कि आखिर प्रेम के बाद तुम्हें रखूँ तो कहँ रखूँ? पर थैंक्स लव काउंसलर! मित्रो! आज की सोसाइटी किस्म किस्म के काउंसलरों से अटी पड़ी है। कोई लव काउंसलर तो कोई ठग काउंसलर। पर मेरे मामले में एकबार फिर थैंक्स लव काउंसलर!

प्रिय! किराए का कमरा तो इत्ता बदबूदार है कि पूछो ही मत! पर करूँ भी तो क्या? शहर में इतने किराए में ये भी नसीब हो गया तो अपने को स्वर्ग का निवासी ही समझता हूँ।

प्रिय! तुम्हें सिर आँखों पर रखता, पर सिर पहले ही बेरोजगारी से आठ पहर चौबीसों घंटे इस तरह घूमता रहता है कि पूछो ही मत। ऐसे में एक और सिरदर्दी मैं इस सिर को देना नहीं चाहता।

प्रिय! आँखों में तुम्हें बसाने की सोचता हूँ। पर आँखों में भविष्य के इत्ते सपने एक दूसरे को बाहर निकालने पर उतारू हैं कि ....ऐसे में उन्होंने एक दूसरे को धक्का देते हुए तुम्हें ही मेरी आंखों से बाहर कर दिया तो?

फिर तुम्हें अपने दिल में बसाने का सोचा तो लगा अपने प्रेम को दिल में रखने के दिन भी जैसे लद गए।

हे प्रिय! एक जमाने में दिल किसी को छिपाकर रखने की सबसे सेफ जगह समझी जाती थी, खासकर प्रेम के मामले में। किसी को किसी के प्रेम की भनक न लगे, बंदे इसलिए अपने इश्क को अपने दिल में बखूबी संभाल, छिपाकर रखते थे।

पर जबसे बीमारियों के दौर में दिल को तरह-तरह की व्याधियाँ होने लगीं तो भौतिक प्रेमियों को लगने लगा कि अपने इश्क को दुनिया की काली नजरों से बचाकर रखने के लिए अब कम्बखत दिल भी सेफ नहीं रहा।

कुल मिलाकर, फिर सवाल वही रहा कि आखिर दोस्तों की नजरों से तुम्हारे इस इश्क को छिपाऊँ तो कहँ छिपाऊँ? जब ये सोचते-सोचते भेजा ड्राई हो गया तो शहर के कुख्यात लव काउंसलर के पास जा पहुँचा। उनके बारे में बड़ा सुना था कि वे लव की सोशल सिक्योरिटी के बारे ऐसे-ऐसे तरीके सुझाते हैं कि कई संत भी उनके चेले हो महंती के साथ-साथ रासलीलाओं के बेखौफ पीर हो गए हैं। क्या मजाल जो उनकी रासलीलाओं पर भक्तों की तो भक्तों की, खुद तक की भी नजर पड़े।

कुख्यात लव काउंसलर से मिलने का समय लेने से पूर्व उनके अकाउंट में अपने पेट को काट उनकी फीस जमा करवाई तो उनसे मिलने का समय मिला।

तय समय पर उनके ऑफिस में गया तो उन्होंने मेरी काउंसलिंग करते पूछा, 'कहो? क्या सहायता कर सकता हूँ मैं आपकी? पर देखिए, अपने भले के लिए खुदा के वास्ते मुझसे कुछ छिपाइएगा नहीं।'

'सर! अजीब दुविधा में फंसा प्रेमी हूँ। जैसे कैसे प्रेम करने की हिम्मत तो कर ली पर अब...,' मैंने कहा तो वे मेरे इतना भर कहने से ही सब कुछ भांप गए।

'अविवाहित हो क्या?'

'जी हाँ! कुछ-कुछ लव काउंसलर,' सच कहना था, सो कह दिया।

'किसी से इतने तनावों के बीच भी प्यार हो गया है? सादर नकस्कार!'

'थैंक्स लव काउंसलर!' सुन उन्होंने ठहाका लगा आगे कहा, 'कोई बात नहीं! हो जाता है। वैसे भी प्यार करने की कोई उम्र थोड़े होती है। हम हैं न! सब संभाल लेंगे।'

'किसको?' मैं चौंका।

'अरे आपको! और किसको?' उन्होंने हौंसला दिया तो मेरा आधा डर जाता रहा। काउंसलर होना ही ऐसा चाहिए।

'तो अब क्या करूँ लव काउंसलर?'

'करना क्या! वही करो जो आज हर एक करता है।'

'मतलब, प्रेम में धोखा?'

'नहीं यार! अब उसे रखने का!'

'पर उसे छिपाकर सेफ रखूं तो कहँ रखूँ हे लव काउंसलर?'

दसों लोकों में दोस्तों से सेफ कहीं कुछ भी नहीं दिखता। और आज दिल में तो बीमारियाँ ही इतनी हैं कि...' मैंने उन्हें अपनी परेशानी बताई तो वे सहज बोले, 'कोई बात नहीं। पड़े रहने दो गले सड़े दिल में इन परेशानियों को। वैसे भी आजकल के दिल का क्या भरोसा! किसे पता कब बेवफा हो जाए?'

'तो हे लव काउंसलर? अब उसे कहाँ रखूँ?'

'अरे उसे अपने मोबाइल में रखो, मोबाइल में चौबीसों घंटे चरते आशिक! बरखुर्दार! सच पूछो तो आज की तारीख में अपने हर खास को मोबाइल में रखने से सेफ जगह और कोई नहीं, बैंक का लॉकर भी नहीं। आज हमारा शरीर दिल के धड़कने से नहीं, मोबाइल की बैटरी से चलता है। दिल की बैटरी धोखा दे सकती है। कारण, उसका पावर बैंक आसानी से उपलब्ध नहीं है अभी! पर क्या मजाल जो मोबाइल की बैटरी धोखा दे जाये। हमारी जेब में मोबाइल हो या नहीं, पर एक अदद पावर बैंक जरूर होता है। ऐसे में परे करो इस गैर जिम्मेदार दिल को और मोबाइल में उसे बेखौफ सेव कर लो।'

'मतलब?'

'कहा न यार! मोबाइल आज की तारीख में अपने हर प्रेम को छुपाने की सबसे सेफ जगह है। सच पूछो तो आज प्रेमी उतना महत्व नहीं रखता जितना उसका नंबर रखता है। वैसे भी आज हम सब हाड़ मांस के होने के बाद भी तो मात्र एक नंबर ही तो हैं न?' उन्होंने जिस मुस्कुराहट के साथ कहा, मेरा पूरा डर जाता रहा। मैंने कुख्यात लव काउंसलर के पांव छुए और अपने इस वाले प्रेम के नंबर को अजीब से नाम से अपने मोबाइल में सेव किया ताकि उसको किसी की भी बुरी नजर तो क्या, नजर भी लगे और बेफिकरा भीगा शेर हो अपने रास्ते हो लिया।

सम्पर्क– गौतम निवास, अप्पर सेरी रोड, नजदीक मेन वाटर टैंक, सोलन-173212 हि.प्र.

....पृष्ठ 5 का शेष

शब्दों में चुटकी ली– 'अरे न्यायमूर्ति जी, आप तो अण्णा के अनुगामी थे! अब क्या हुआ?'

वे हिचकिचाये– 'वह तो मैं अब भी हूँ।'

विधायक जी– 'अच्छा! तब ये रेड-वेड का क्या चक्कर है?'

उन्होंने अटकते हुए जवाब दिया– 'वह तो किसी बदमाश की साज़िश है, कोर्ट में जल्द ही साबित हो जायेगा।'

'सारे मुज़रिम ऐसा ही कहते हैं।' विधायक जी ने ताना कसा– 'लेकिन हमें तो बता दीजिए कि नौकरी में रहते आपने कितना बटोरा था?'

जज साहब क्रोधित हो बोले, 'मैं गंदी राजनीति का कीड़ा नहीं हूँ। अपने उसूलों पर चलता रहा हूँ और चलता रहूँगा।'

'यानी आप मेरे जैसे ही हैं...' विधायक जी ने नरमी से सुझाव दिया– 'लेकिन आप कतई फिक्र न करें। आपका कोई कुछ भी बिगाड़ नहीं पायेगा, मैं जो हूँ आपके साथ...'

जज साहब का धैर्य अब तक चुक गया था। बोले, 'पर आपको मुझसे इतनी हमदर्दी क्यों है भला...'

विधायक जी ने विनम्रता से बताया– 'कैसे न होगी... आख़िर आप मेरे होने वाले समधी हैं। आपकी इज़्ज़त का मैं ध्यान न रखूँगा तो कौन रखेगा?...

जज साहब सिद्धांतवादी थे। साफ-साफ कह दिया– 'आपको मेरी चिन्ता करने की कोई ज़रूरत नहीं है। मैंने कोई ग़लत काम कभी किया नहीं है। मैं वैसे ही बरी हो जाऊँगा। हाँ, इतना तय है कि आपकी इस चाल में फँसकर मैं अपनी बेटी का विवाह आपके नालायक बेटे से हरगिज़-हरगिज़ न करूंगा। गांठ बांध लीजिए।'

इसके उपरांत विधायक जी ने ऐसी चक्री चलायी कि जज साहब कहीं के न रहे। उनके ऊपर पैसे खाकर कई फैसले बदलने के, नियुक्तियों में गड़बड़ी के, और तो और एक अधिवक्ता युवती के साथ छेड़छाड़ करने के ऐसे-ऐसे आरोप लगे कि उनका जीना हराम हो गया।

चन्द दिनों बाद हमारे एमेले साब की ओर से उनके बेटे की शादी का निमंत्रण-पत्र मिला। उन्हीं जज साहब की बेटी दुल्हन थी। मुझे आश्चर्य तो नहीं हुआ, प्रसन्नता हुई कि अभी भी इस भारत वर्ष में बुरे, और बुरे बनने को विवश लोगों का प्रतिशत अच्छा-ख़ासा बना हुआ है।

सम्पर्क–बी-40, एफ़-1, दिलशाद कालोनी, दिल्ली-110 095
मो. 9971744164. ईमेल: ashokgujarati07@gmail.com

लोकल विद्वान

अशोक भाटिया

इधर साहित्यकार की एक नयी किस्म चली है, जिसे साहित्याकार कहते हैं। एक आदमी साहित्य में डाक्टरी करके भी बीमार ही रहे और साहित्यकार न बन पाये, तो वह साहित्य का आकार होने की ठान लेता है। वह घर में किताबों का ढेर लगा लेता है। ढेर को देखकर लोग उसे साहित्यकार मानने लगते हैं। इस तरह घरेलू विद्वान के रूप में उसकी चर्चा होने लगती है। इतिहास बताता है कि प्राचीन काल में घरेलू विद्वान बनने की तीन निशानियाँ थी—नज़र कमजोर हो जाये, चाल धीमी हो जाये और छाती अंदर घुस जाये। लेकिन आजकल विद्वान बनने का ऐसा उम्मीदवार सब कुछ कर चुकने पर भी ऐसी नौबत नहीं आने देता। वह बना रहता है।

डा. मलिक घरेलू विद्वान से आगे लोकल विद्वान बनना चाहते थे। लेकिन रास्ता बड़ा टेढ़ा था और समय बहुत थोड़ा था। पन्द्रह साल से पढ़ा रहे थे, रीडर भी बन चुके थे, पर विद्वान नहीं हुए थे। अब गुंजाइश कम होने के बावजूद उन्होंने कुछ तरीके अपनाये।

छात्र कभी उनसे गम्भीर होकर नहीं पढ़े थे। अब तक वे इसी में खुश भी थे। नहीं तो पहले पढ़ना पड़ता। नया पेपर लगता तो वे नहीं पढ़ाते थे। पुराना आदमी भला नया पेपर क्यों पढ़ाएगा। लेकिन अब उन्होंने अपने अहिंसावादी अस्त्र का उपयोग किया। साल के अन्त में एक लड़के का रजिस्टर ले लिया। रजिस्टर में सारे प्रश्न हल किए हुए थे। रजिस्टर हाथ में आते ही वे विद्वान हो गये, जैसे आदमी मंत्री बनते ही योग्य बन जाता है। तो उस रजिस्टर से बच्चों को पढ़ाकर वे दो हज़ार रुपये माहवार कमा रहे हैं। वह छात्र, जिसका रजिस्टर था, आज तक बेरोजगारी के दलदल में फंसा है, जबकि डॉ. मलिक पढ़ा-पढ़ाकर महान हुए जाते हैं। रजिस्टर से पढ़ाकर डॉ. मलिक भारतीय संस्कृति के इतिहास में त्याग और तपस्या का एक और अध्याय जोड़ रहे थे। कभी-कभी छात्र रजिस्टर लेने आता है तो अध्यापक कहते हैं– संघर्ष करके यहँ तक पहुँचे हैं। छात्र अध्यापक के घर जाता है तो बेडरूम से उत्तर आता है—'इस समय तो मैं आराम कर रहा हूँ।' छात्र उन्हें आराम के संघर्ष में छोड़कर आ जाता है।

लेकिन रजिस्टर हड़पने से अहिंसावादी मलिक की विद्वत्ता की छाप कुछ छात्रों पर ही लगी थी। अब इससे आगे क्या किया जाये? कुछ सोचकर उन्होंने एक फंक्शन रखवाया। उसमें एक विद्वान को आमंत्रित किया। वह इसलिए आ गया कि रिटायर होने के बाद भी फर्स्ट क्लास में सफर करने का मौका मिला था। विद्यार्थी इसलिए आ गये कि शायद वह सवाल परीक्षा में आ जाये। क्लर्क इसलिए भाग-दौड़ कर रहे थे कि जलपान में वे भी शामिल हो सकेंगे। गोष्ठी के बाद एक अध्यापक उन्हें अपने घर इसलिए रखेगा कि उसे रीडर बनना है। दूसरा इसलिए खाना खिलाएगा कि शायद हिन्दी साहित्य में हमारा नाम भी रख देंगे। एक किसान साहूकार को चाहे जितनी बोरियाँ फ्री फंड में दे दे, पर उसका कहीं नाम नहीं आता। और अध्यापक छः किताबों से चोरी किया हुआ माल लपेटकर इतिहास में आना चाहता है। उसका नाम चोरों की लिस्ट में आना चाहिए। कुल मिलाकर कुछ लोग चोर दरवाज़े में चोर चाबी लगाकर इतिहास में घुसे हुए हैं, जबकि कुछ दुधारू गौंए बन फाटक के सामने खड़े हैं।

तो गोष्ठी के लिये सारा विभाग जमकर काम कर रहा था। विज्ञापन बढ़िया होने से लोग गोष्ठी की क्वालिटी का अन्दाज़ा लगा रहे थे। इसी तरह निमन्त्रण-पत्र, कुर्सियाँ, लैक्चर स्टैंड, चाय-पानी, सब पर परिश्रम किया गया। फूलों की लड़ियाँ लगाने पर विशेष ध्यान दिया जा रहा था। शायद इससे प्रभावित होकर विद्वान कुछ अच्छा भाषण दे जाता होगा। इस तरह ज्ञान पाने के लिये लोग शरीर से बड़ी मेहनत कर रहे थे।

तभी विद्वान के आने की घोषणा की गयी। लोगों को समय पर आने को कहा गया था– वे आये। विद्वान डेढ़ घण्टा लेट आया। विद्वान की विद्वत्ता इसी में है कि वह लोगों से इंतज़ार कराए। विद्वान को मालाएँ डाली गयीं। तभी वाइस चांसलर भी आ गये। हर गोष्ठी में उन्हें उद्घाटन के लिये बुलाया जाता है। हर गोष्ठी में वे खड़े होकर कहते हैं, ''मेरी इस विषय में बड़ी रुचि है।'' लेकिन वे किसी भी गोष्ठी में भाग नहीं लेते। हर विषय के छात्र तालियाँ बजाते हैं और वी.सी. चले जाते हैं। हर विषय के छात्र अपने को उनके नजदीक मानते हैं और वे किसी के नज़दीक नहीं हैं।

उद्घाटन के बाद चाय पी गयी। चाय के पहले सौ लोग बैठे थे, चाय पर 125 लोग आये हुये थे। चाय के बाद गोष्ठी शुरू हुई तो कुल 24 लोग रह गये। सामने विद्वान शोध की संभावनाओं पर अपना लेख पढ़ रहा था। वे अध्यापक जो विद्वान नहीं हो सके थे, शारीरिक श्रम पर उतर आये थे। छात्रों की हाजिरी ली जा रही थी– वे हाजिरी के लिए बैठे थे। उनकी हाजिरी होने पर वे शोर

करने लगे। शोर करने के लिए वे बड़ी दूर से आये थे। लेकिन उन्हें भाषण दिया जा रहा है। वे तड़प-तड़प कर कुर्सी के पायों पर पैर रख रहे हैं। उनमें से कुछ छात्रों को चपरासी पानी पिला रहे हैं। विभाग का अध्यक्ष भाषण देने वाले विद्वान का टी.ए-डी.ए बिल बना रहा है। इसी तरह सारा ज्ञान बंट रहा है। खूब आदान-प्रदान हो रहा है।

डॉ. मलिक सामने सोफे में घुसे हुए हैं। उनकी दोनों बलिष्ठ भुजाएँ सोफे पर सोई हुई हैं। सिर सोफे के कन्धों पर टिका है। इससे जाहिर होता है कि वे लोकल विद्वान अवश्य होंगे। देखने में ऐसा लगता है कि वे भाषण सुन रहे हैं। उनका अहोदा बड़ा है लेकिन साख नहीं है। इसलिए बीच-बीच में सिर हिला देते हैं, जिससे लोग समझें कि इसे भी समझ आ रहा है। इससे आदमी धीरे-धीरे विद्वत्ता के निकट पहुँचता है। लोग डॉ. मलिक को हैरानी से देख रहे हैं कि इसे भी समझ आने लगा है। लेकिन दस मिनट बाद यह बात आम हो गयी। वह दुकान पर लकड़ी के सजे बन्दरों की तरह सिर हिलाता जा रहा था। लोग हँसने लगे। डॉ. मलिक समझदार निकला। उसने सिर 'ना' में हिलाना शुरू कर दिया। उसकी मान्यताएँ सचमुच टूटने लगी थीं। वह उठकर बाहर चला गया और अपनी मान्यताओं को बचाये रखने में सफल रहा।

एक अध्यापक के पास न कुछ करने को है और न ही सुनने को। वह अपने को उपेक्षित और छोटा समझने लगा है। खास और बड़ा हो जाने के लिए वह बन रहे टी.ए-डी.ए, बिल का टोटल देखने लगता है। अचानक उसे तरकीब सूझती है। वह एक लड़के को बुलाता है, उसके कानों में अपना मुँह डालकर कहता है-जाओ, एक गिलास पानी ले आओ, कहीं इन्हें प्यास न लग जाए। लोग अब इस अध्यापक को देखने लगे हैं। अध्यापक सन्तुष्ट हो जाता है।

लड़का पानी लाने के लिए बाहर गया है। विभाग में एक ही गिलास है- उस पर विद्वान के आगे गुलदस्ता टंगा पड़ा है। आदमी प्यासा रह लेगा-गुलदस्ता हटाने से विद्वान को ठेस लगती है। लड़का दूसरे विभागों की तरफभागता है। सब बंद हो चुके हैं। एक और लड़का कैंटीन की ओर भागता है। तीसरा लड़का उन्हें देख रहा है। इस तरह ज्ञान बंट रहा है। गिलास कहीं नहीं मिलता। क्या ऐसा नहीं हो सकता कि विद्वान जग में से पानी पी ले? या हथेली से पी ले? पर इसमें कला नहीं है। हथेली से पानी पीने से विद्वत्ता को ठेस पहुँचती है। आखिर एक छात्र अपने घर से गिलास लेकर आता है।

कमरे में ज्ञान बँट रहा है। लोग बीच-बीच में तालियाँ नहीं बजा रहे या गलत जगह बजा रहे हैं। परम्परा टूट रही है। अध्यापक निराश होते हैं। एम.ए. में हो गये, पर अभी तक तालियाँ बजानी नहीं आयीं। विद्वान का उत्साह उखड़ रहा है। सोचता है-कब खत्म करूँ? लोग पहले सचेत हो जायें। किसी को भी भाषण समझ नहीं आ रहा। समझ में न आये, इसी में विद्वान की पंडिताई है। विद्वान वह है, जो उलझाए, वरना उसे दोबारा कोई नहीं बुलाएगा। युवा पीढ़ी से बचने का सरल उपाय है-विद्वान हो जाओ।

भाषण खत्म हुआ। जिसे पता चलता गया- तालियाँ बजाता गया। तभी बाहर से डॉ. मलिक आये। उन्हें विद्वान बनने की बड़ी तमन्ना थी। मंच पर आते ही बोले- अमुक-अमुक लोगों ने मुझे इस विषय का विद्वान कहा है। मैं विद्वान तो नहीं हूँ लेकिन कोशिश की है-और कोशिश सफल हो जाती है। लोगों पर असर पड़ता है। रीडर हो गया है-कुछ तो आता ही होगा। विद्वान मंच पर जमा हुआ है। कुछ लोग घड़ी देख रहे हैं। एक के पति ने आना है। एक की प्रेमिका ने आना है। एक ने गाड़ी पकड़नी है। एक ने पेशाब करना है। ज्ञान बंट रहा है।

आखिर भाषण खत्म हुआ। लोग बाहर भागे। विद्वान शहीदी मुद्रा में बैठ गया है, जैसे पांच मिनट में सारे हिन्दी साहित्य का उद्धार कर आया हो।

तभी एक लड़का अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने हेतु मंच पर आया। लोगों ने उसकी तरफ देखा और फिर ईमानदारी से शोर करने में लग गये। उन्होंने सोचा होगा-यह अभी बहुत छोटी उम्र का है। अभी तक इसकी आँखों पर चश्मा नहीं चढ़ा-यह क्या बोलेगा। इसके चेहरे पर दो-तीन किलो मांस नहीं लटक रहा, पेट बाहर नहीं निकला-यह नहीं बोल सकता। लोग अध्यापक के लक्ष्य भी यही मानते हैं। ऐसा अक्सर सोचा जाता है। एक बोस के घर उसका मेहनती नातेदार पहुँच जाये, तो नौकर एकाध दिन तो सलाम ठोंकते हैं। लेकिन जब देखते हैं कि सुबह उठकर महाशय अपना कम्बल खुद ही तह कर रहे हैं, तो नौकर उनको सलाम मारना बंद कर देता है। उनके मुताबिक यह आदमी बोस नहीं हो सकता। इसमें बोस के गुण नहीं हैं। जो कामचोर न हो, देखने में डरावना न लगे, जो मोटा न हो, वह बोस नहीं हो सकता।

तो गोष्ठी में लोगों ने सोचा कि यह लड़का कुछ बोल नहीं सकता। मुश्किल से लोग जब चुप हुए तो लड़का यह कहकर कि तुम कुछ सुनने के काबिल नहीं हो-नीचे उतर आया।

अन्त में अध्यक्ष महोदय उठे। वे हाल ही में अध्यक्ष हुए थे। अध्यक्ष होने के बाद उनमें कुल पँ च बदलाव आये थे। घर पर फ्रिज, एक सूट और एक साड़ी आ गयी थी और ऑफिस में एक कलमदान और चार कुर्सियाँ।

तो अध्यक्ष ने विद्वान का जमकर धन्यवाद किया। यह विद्वान पिछले साल इन्हें अध्यक्ष बना गया था।

संपर्क : 1882/13, अर्बन एस्टेट, करनाल-132001 हरियाणा
मो. 9416152100

सत्यव्रत

दिलीप तेतरबे

साहब, मैं आपका प्रिय किस्सागो हूँ...और अब मैं नई स्टोरी ढालने जा रहा हूँ... साथ ही, मैं अपना नाम बदल रहा हूँ...क्या रखूँ अपना नाम? हाँ, दिमाग में मुझे अपना नया नाम क्लिक कर गया है। असत्यानंद किस्सागो...जैसा युग वैसा नाम...जिस युग में असत्य का सिक्का चलता हो, उस युग में मुझ जैसा सोलिड किस्सागो सत्य बोल कर, भूख से मरने की कोशिश क्यों करेगा...मैंने सत्य और असत्य पर बहुत शोध किया है, साहब! मेरी एक ताजा रिपोर्ट देखिए–

यह आम धारण बन गई है कि सच बोलने वाले मूर्ख होते हैं और सदा कष्ट में रहते हैं। सच्चाई का व्रत लेने वाले विवादित लोग होते हैं। लोग कहा करते हैं, 'जब सब लोग झूठ बोल रहे हों, वहाँ कोई युधिष्ठिर या कोई देवता सत्यनारायण पैदा हो जाएगा तो उसे पिटना ही पड़ेगा। जमाने का जुल्म सहना ही पड़ेगा। लोगों के जूते खाने ही पड़ेंगे। अरे, जूता खाना ही है तो चाँदी के जूते खाओ और चैन से सो जाओ। कम्बल ओढ़ कर घी का पान करो। साहब, आज कल लोग झूठ बोलने की क्रिया को व्यावहारिक और सही मानते हैं। अगर झूठ रोटी देती है तो झूठ को क्यों न अपनाया जाए? सच बोल कर भूखे मरने वालों पर समाज के लोग फब्तियाँ कसते हैं और कहते हैं कि वह ट्रूथोफोबिया से ग्रस्त है। बेचारा है। साहब, साहित्य में ट्रूथोफोबिया से संबंधित स्टोरी खूब सराही जा रही हैं। सच्चे लोगों का खूब मजाक उड़ाया जा रहा है...'

साहब, एक दिन शहर के वे लोग, जो सच न बोल पाने के कारण बहुत ही मानसिक दबाव में थे, कुंठा में थे...मुझ किस्सागो को आमंत्रित किया और मुझसे कहा कि मैं एक ऐसी स्टोरी सुनाऊँ, जिससे कि उनका मन हलका हो जाए और झूठ बोलने की शक्ति उनको मिले। उनका गिरा हुआ मनोबल ऊँचा हो जाए। उनकी कुंठा दूर हो जाए। मैंने उनकी चुनौती स्वीकार की। मैंने अपनी टाई ढीली की, जुल्फों को एक सिंपल सा झटका दिया, उपस्थित श्रोताओं का जायजा लिया और शुरू हो गया।

साहब, मैं असत्यानंद किस्सागो हूँ। अभी जो स्टोरी मैं आपको सुनाने जा रहा हूँ, वह सौ प्रतिशत सच है। आप मुझ में विश्वास रखें और इस स्टोरी से सीख ले कर, इस स्टोरी से ऊर्जा ले कर, असत्य का प्रयोग करते हुए जीवन को सफल बनाएँ और महानुभावो, आपके मन में कभी भी झूठ बोलते हुए ग्लानि रूपी डायन का प्रवेश न हो...आपको कभी सच न बोल पाने का दुःख न हो। यह स्टोरी इस युग के देवता काल किंकर ने सिर्फ आपके लिएए मुझे सपने में सुनाई थी। वही स्टोरी पेश कर रहा हूँ।

साहब, पता नहीं सत्यव्रत को क्या हो गया था। उसे कौन सी बीमारी हो गई थी। वह जिस गली में जाता उस गली का सच बोलने लग जाता। और उस गली के लोगों से पिटता, लहू-लुहान हो जाता। उसे अस्पताल में टांके-सांके पड़ते। सात-आठ दिनों में वह चंगा हो कर, फिर से किसी नई गली में प्रवेश करता और सच बोलने लग जाता। और फिर पिटता...

शायद, वह मानसिक रूप से बीमार पड़ गया था। एक अनुभवी डाक्टर के अनुसार उसे ट्रूथोफोबिया की बीमारी हो गई थी, यानी सच बोलने की भयानक बीमारी हो गई थी। और यह बीमारी लाइलाज थी। उसके माँ-बाप अपने बेटे के भविष्य को ले कर, चिंतित रहते और अपने आप से पूछते, 'इस सत्यव्रत का क्या होगा?'

वैसे, सत्यव्रत किसी भी गली में घुसने के बाद, गली के लोगों द्वारा पिटाई से बेहोश होने तक, जितने सत्य बोल दिया करता था, वे उसी तरह पूरे शहर में फैल जाते, जैसे कंप्यूटर में वायरस तत्क्षण फैल जाता है। वैसे, अमेरिका में सच के वायरस के फैलाव को रोकने के उद्देश्य से एंटी ट्रुथ सोफ्टवेयर का विकास करने के लिए सौ वैज्ञानिकों का एक ग्रुप बनाया गया था... और वे वैज्ञानिक रात-दिन एक कर एंटी ट्रुथ सोफ्टवेयर बनाने में लगे हुए थे...लेकिन साहब, मैं आपको आश्वस्त करता हूँ कि आपको सच के वायरस से बचने के लिए किसी सॉफ्टवेर की जरूरत नहीं पड़ेगी। मैं अपनी यह स्टोरी ही आपके दिमाग में इम्प्लांट कर दूँगा और सच आपको कभी छू भी नहीं पाएगा और आप सहज भाव में असत्य बोल पाएँगे।

साहब, मैं दवा-दारू से दूर रहने वाला किस्सागो हूँ, कोई डाक्टर या मनोचित्सक तो हूँ नहीं कि सत्यव्रत की बीमारी के बारे में आधिकारिक तौर पर कुछ कह पाऊँ, लेकिन उसकी बीमारी छूत की बीमारी थी। यह मुझे तब पता चला जब एक मनोचिकित्सक

अति उत्साह में सत्यव्रत की बीमारी में दिलचस्पी लेने लग गया। साहब, देखिए कि आगे क्या हाल हुआ, उस मनोचिकित्सक का।

साहब, मनोचिकित्सक उलट बुद्धि जी ने सत्यव्रत के केस को एक चुनौती के रूप में लिया। और वे लग गए उस पर शोध करने। शोध के पूरा होने पर उन्होंने एक संवाददाता सम्मलेन में पत्रकारों से कहा, 'सत्यव्रत, को टूथोफोबिया की बीमारी से ग्रस्त करने के लिए उसके गुरु वेद जी और पिता ईश्वर लाल जी पूरी तरह से दोषी हैं। गुरु वेद जी ने उसके दिमाग में यह गलत बात डाल दी कि वही आदमी, आदमी होता है, जिसके हृदय में संवेदना की धारा निरंतर बहती रहती है। और सत्यव्रत ने अपने हृदय में संवेदना की धारा को अविरल बहने दिया। यह इस युग के लिए एक घातक बात थी। अगर आदमी संवेदनशील हो जाएगा तो वह दूसरों के हित में सोचने लगेगा। दूसरों के लिए अपनी कमाई और ऊर्जा व्यय करने लगेगा। अपने स्वार्थ को भूल जाएगा। सच बोलने लगेगा और जीते जी समाप्त हो जाएगा।

साहब, मैं असत्यानंद किस्सागो हूँ, फिर भी मैं सत्यव्रत की सच्ची कहानी सुनाऊँगा। मैं सत्यव्रत का इलाज नहीं कर सकता हूँ...लेकिन सत्यव्रत को सत्य का गुलाम बनाने में उसके पिता ईश्वर लाल जी किस प्रकार दोषी हैं, यह पहले जान लीजिए।

मनोचिकित्सक उलट बुद्धि ने कहा, 'उसके पिता ईश्वर लाल जी ने बचपन से उसे ईश्वर का नाम ले कर डराया-धमकाया और उसे कहा कि सत्य बोलो नहीं तो नरक जाना होगा। नरक में उसको अनेक कष्टों से गुजरना होगा। पिता के प्रभाव में बचपन में ही उसका जीवन दर्शन गलत रास्ते पर चल पड़ा। इस प्रकार, अपने गुरु और पिता के कारण बेचारा सत्यव्रत सत्य का गुलाम हो गया। और गुलामी कैसी भी हो, गुलामी तो गुलामी ही होती है। और इसी गुलामी के कारण सत्यव्रत अपने जीवन में असफल हो गया और उसके लिए पृथ्वी पर ही नरक उतर आया। वह कुंठाग्रस्त हो गया। उसका कुंठाग्रस्त होना बिलकुल स्वाभाविक था।

साहब, मनोचिकित्सक उलट बुद्धि जी ने सत्यव्रत को सच बोलने की भयानक बीमारी से मुक्त करने के लिए एक वर्ष तक उसकी मुफ्त काउंसिलिंग करने की घोषणा भी कर दी। और इस काउंसिलिंग का क्या उत्तम प्रभाव हुआ, अब वह देखिए।

साहब, मैं तो शक्की किस्सागो हूँ और मुझे शक है कि शायद, उलट बुद्धि जी भी संवेदना के शिकार हो गए थे। खैर, उन्होंने सत्यव्रत की काउंसिलिंग शुरू की। एक साल के बाद, उलट बुद्धि जी स्वयं टूथोफोबिया के शिकार हो गए। और इस प्रकार शहर में इस दिल दहलाने वाली बीमारी से दो-दो व्यक्ति पीड़ित हो गए। शहर के शरीफ लोगों का जीवन इन दोनों के कारण दहशत से भर गया था। लेकिन, ईश्वर की कृपा से, जल्दी ही उलट बुद्धि जी का निधन हृदय गति रुक जाने से हो गया और वे बड़ी जल्दी ही सत्य बोलने की बीमारी से मुक्ति पा गए। फिर शहर में इस बीमारी से ग्रस्त एक ही रोगी रह गया और वह था सत्यव्रत। उसने फिर से गलियों में जाने और सच बोलने का सिलसिला शुरू कर दिया।

साहब, मैं तो हल्का-फुल्का किस्सागो हूँ। इसलिए मैं फुदक-फुदक कर सत्यव्रत का सच्चा हिसाब रख रहा था। साहब, सत्यव्रत का जैसा प्रभाव मैंने देखा और शहर के लोगों ने उससे बचाव के जो तरीके अपनाए, उसे जैसा का तैसा आपको सुना रहा हूँ...एक बात और, जो बात दिखती है, वह सच ही हो, यह जरूरी नहीं है...खैर, स्टोरी सुनिए।

शहर की कुल सौ गन्दी गलियों के हेवी टैक्स पेयर लोग सचेत हो गए थे। गलियों के निवासियों ने अपनी-अपनी गली में गलत काम करना त्याग दिया था। वे किसी रमणीय स्थल की यात्रा पर चले जाते, वहीं गलत-सलत काम करते और सकुशल सफेद, वस्त्र में, वापस अपनी गली में लौट आते और इस प्रकार उनका सच उनकी गली में नहीं बहता। ऐसा उनका विश्वास था, लेकिन यह विश्वास गलत था। वे सत्यव्रत के रडार से बच नहीं पाते थे, क्योंकि वह तो हर आदमी का सच उसकी गली में प्रवेश करते ही जान लेता था।

साहब, गली के लोगों का मानना था कि सत्य जेल का रास्ता खोलता है और झूठ स्वर्ग का द्वार--यही जीवन का व्यावहारिक दर्शन है। किसी शरीफ आदमी का सत्य कभी भी, किसी भी कीमत पर उजागर नहीं होना चाहिए और हर शरीफ आदमी का असत्य ही उसकी पहचान होनी चाहिए। प्रत्येक गली के लोगों ने अपनी-अपनी गली में रात-दिन चौकसी बढ़ा दी थी ताकि गलियों में प्रवेश के पहले ही सत्यव्रत को पीट-पाट कर अस्पताल पहुँचाया जा सके और वह सत्य उगल न पाए।

साहब, मैं तो साधारण किस्सागो हूँ, और बात ऊँचे लोगों की कर रहा हूँ, विद्वानों की कर रहा हूँ...अगर श्रोताओं में कोई ऐसे लोग हों तो क्षमा करेंगे...साहब, अब मैं आप सब की आज्ञा ले कर स्टोरी को फिर से स्टार्ट करता हूँ।

हर गली के लोग एक ही तरह से सोचते थे और एक ही तरह से काम करते थे। वे धन, शक्ति, काम, क्रोध, मद, लोभ आदि की शक्ति से प्रेरित, आँखें मूँद कर, अपने स्वार्थ के पीछे दिन-रात भागते रहते और इस प्रक्रिया में सफलता उनके कदम को चूमती थी। और जो लोग सत्य के साथ थे और स्वार्थ से परे थे, वे दुनिया में रहने लायक नहीं रह गए थे। उनको घर नहीं झोंपड़ी

नसीब होती थी, एक बदबूदार जिंदगी नसीब होती थी।

साहब, मैं तो फंटास्टिक शर्महीन किस्सागो हूँ और मुझे यह कहते शर्म नहीं है कि गली के लोग बहुत ही समझदार और व्यावहारिक थे। वे हर कुछ अपने लाभ की दृष्टि से देखते थे। और लाभ कमाना ही तो उनके जीवन का उद्देश्य रह गया था... अब जरा उनकी व्यावहारिकता देखिए–

साहब, थेथर सत्यव्रत किसी भी गली में चौकसी पर लगे दस्ते को अक्सर धत्ता बता कर, प्रवेश कर जाता और सच बोलने लगता और सच बोलते हुए कुछ ही देर बाद गली के फौलादी दस्ते द्वारा पकड़ा जाता। उसकी पिटाई शुरू हो जाती। लेकिन, गली के निवासी उसे जान से नहीं मारते थे। इसके पीछे उनका नेक स्वार्थ था। वे दूसरी गली के सत्य में दिलचस्पी रखते थे। बखूबी रखते थे। वे कहते, 'अरे अपनी गली में उसने जो कचरा किया सो किया, हमें उसके माध्यम से दूसरी गली का सच जान लेना जरूरी है ताकि हम दूसरी गली के लोगों के सामने सिर उठा कर चल सकें...अपने सच के सामने उनके सच को रख कर, अपने सच के लिए कफ़न या चादर का इंतजाम कर सकें...इस लिए हमें सत्यव्रत को जान से नहीं मारना है...उसे दूसरी गली में मार पीट कर धकेल देना है और दूसरी गलियों के सत्य का संकलन कर लेना है। बड़े ही प्रैक्टिकल और नेक विचार थे उनके...'

साहब, मैं तो घड़ीदार किस्सागो हूँ। कभी-कभी स्टोरी सुनाते हुए मुझे घड़ी की सूई को आगे या पीछे करना पड़ता है...सो अभी घड़ी की सुई को बैकवार्ड चला कर, चलते हैं सत्यव्रत के जीवन के उस काल की ओर जिसमें किसी सुंदरी के प्रेम को पाने की ललक थी, चाहत थी। सत्यव्रत के जीवन का वह पार्ट भी देखिए।

साहब, सत्यव्रत कभी अपनी चुलबुली सहपाठिनी मिस कोयल के प्रेम में दीवाना था। मतवाला था। मजनू बन गया था। वह मिस कोयल पर जान छिड़कता था। वह रात-दिन मिस कोयल के बारे में सोचता रहता था। उसकी एक सपने सोते जागते देखता था। मिस कोयल जब भी उसके पास से अपनी पायल खनखनाती हुई निकलती, उसका हृदय फ्रंटियर मेल बन जाता। घर में उसके सामने उसकी माँ अति स्वादिष्ट भोजन परोस कर रख देती। वह थाली में मिस पायल को देखने लगता और भोजन, थाली में पड़ा-पड़ा ठंडा हो जाता। ऐसे ही मूड में जब एक बार थाली के सामने सत्यव्रत बैठा था तो मिस कोयल अपनी पायल खनखनाती-झनझनाती हुई पहुँची। उसने सत्यव्रत से पूछा, 'अरे, ओ मिस्टर, तुम्हारे सामने भोजन पड़ा हुआ है और तुम बगुले की तरह पानी की किस मछली पर ध्यान लगाए बैठे हो? तुम्हारी नजर किस मछली पर है? डेजी, किट्टी, सिट्टी...किस चुड़ैल पर तेरी नजर है?'

साहब, प्रेम की गंगा में गहरे डूबे सत्यव्रत ने मिस कोयल की बातों का कुछ भी जवाब नहीं दिया। तभी सत्यव्रत की माँ आई और उसने आँसू ढलकाते हुए मिस कोयल को बताया, 'पता नहीं इसके सिर पर कौन सी डायन सवार हो गई है...न भोजन करता है, न किसी से बात करता है...कभी छत की ओर टकटकी लगाए देखता रहता है...कभी ठंडी तो कभी गरम आहें भरता है...इसका पढ़ना-लिखना तो चूल्हे में चला गया।'

साहब, शर्म से लाल पड़ गई मिस कोयल ने कहा, 'आंटी जी, मैं भी इसी तरह की स्थिति से किसी कलमुँहे के कारण गुजर चुकी हूँ...इस बीमारी को मैं जान गई हूँ...मैं यह भी समझ गई हूँ कि प्रेमिका के इशारे न समझने वाले आशिक त्याग देने योग्य होते हैं...और आंटी इसके पीछे कोई डायन नहीं पड़ी लगती है...यह तो खुद अपने आप का दुश्मन लगता है...यह कायर है और शायद अपने दिल की बात किसी के सामने रख नहीं पा रहा है, इसलिए इस मुए की यह हालत है...खैर, आंटी जीए अभी मैं सत्यव्रत की इसी कमजोरी को देखते-परखते हुए उसे राखी बाँधने आई हूँ...आप मुझे इसके सामने थोड़ी देर के लिए अकेला छोड़ दें तो शायद मैं इनकी समाधि तोड़ पाऊँ...' मिस कोयल की प्रार्थना सुन कर सत्यव्रत की माँ अपने कमरे में चली गई।

साहब, मैं तो प्रेमी किस्सागो हूँ, लेकिन कभी जेब में इतने पैसे हुए नहीं कि मैं स्वयं इश्क-विश्क की सोचूँ और समझूँ...और उसमें कुछ इंवेस्ट करूँ...बस एक बार मैंने इश्क करने की गलती से मिस्टेक से की थी। पर मेरी बात छोड़ दीजिए...और साहब, मिस कोयल और सत्यव्रत के इश्क-विश्क के बारे में मैंने जो सुना उसे ही सुनिए–

साहब, मिस कोयल ने अपनी पायल जरा जोर से बजाई। पायल की झंकार सुन कर, सत्यव्रत ने आखें पूर्ववत बंद किए, यह शुभ वचन कहा–

'यह पायल की झंकार तो मेरे हृदय रूपी टेपरिकार्डर में अंकित है। यह झंकार तो मिस कोयल के सुडौल चिकने पैरों की खनकती-झनकती पायल की है, जिसे मैं चोरी-चुपके निहारता रहता हूँ...मैं चाहता हूँ कि वह और छोटी स्कर्ट और छोटी स्कर्ट पहने, और मैं खो जाऊँ उसके मूर्तिरूपेण पैरों में... उसके दो पैर नहीं प्रेम के दो पेड़ हैं...लेकिन, मेरे दिल रूपी टेपरिकार्डर को किसने ऑन किया? अगर कोई मेरे दिल से निकलती पायल की इस झंकार को सुन लेगा तो मिस कोयल और मेरे बीच क्या संबंध है, यह सभी लोग जान जाएँगे। मैं मिस कोयल के बारे में क्या-क्या सोचता रहता हूँ, क्या-क्या कल्पना करता रहता हूँ, वह जग जाहिर

हो जाएगा। अरे, मैंने तो अपने कल्पना लोक में उसके साथ मधु-रात्रि भी मना ली है... मुझे तो बहुत शर्म आ रही है...अपनी कल्पना पर...'

साहब, मैं अहमक किस्सागो होते हुए भी कह सकता हूँ कि सत्यव्रत ने अपने प्रेम का अपनी पहली प्रेमिका के सामने कम से कम नब्बे प्रतिशत इजहार कर दिया था। लेकिन, मिस कोयल बहुत ही गुस्से में थी। उसने अपने हाथ की राखी उसके सिर पर दे मारी और उसके घर से वह पायल खनकाती हुई निकल गई...

साहब, जब सत्यव्रत ने आँखें खोलीं तब तक मिस कोयल जा चुकी थी और वह अपने सिर से खाने की मेज पर गिर पड़ी राखी को देख कर, शर्मिंदा हो रहा था। लेकिन, तभी उसके सिक्स्थ सेन्स ने काम करना शुरू कर दिया।

'अभी मिस कोयल ने मुझे राखी पहनाई कहाँ है। कल मैं उसके सामने अपने पवित्र अघोषित प्रेम की घोषणा कर दूँगा और मैंने जो कल्पना उसके संबंध में की है, उसके लिए उससे क्षमा माँग लूँगा। हाय, मैंने उसके साथए उसे बिना बताए ही मधु-रात्रि मना ली...मैं तो बिल्कुल पापी हूँ...'

साहब, मैं विचारक किस्सागो हूँ और हर दिन समाज में घटती स्टोरी की लड़ियाँ बनाता रहता हूँ। लेकिन, कभी मैंने ऐसा प्रेमी नहीं देखा, जिसने अपनी प्रेमिका के संबंध में की गई कल्पना के आलोक में अपनी प्रेमिका से क्षमा मांगने का निर्णय लिया हो। यहाँ तो लोग बलात्कार करने के बाद, उसे अपना जायज कदम ठहराने के लिए, बलत्कृत लड़की के चरित्र पर ही हमला कर देते हैं। साहब, मुझे इस दृष्टि से सत्यव्रत थोड़ा पागल लगा या मुझे लगा कि ओवर रिएक्ट कर रहा था। खैर, अपने निश्चय के अनुसार सत्यव्रत मिस कोयल से मिलने के लिए मिलन पार्क में पहुँचा। अब देखिए दोनों के बीच क्या बातें हुईं।

'मिस कोयल, यह लाल गुलाब सिर्फ तुम्हारे लिए लाया हूँ, इसे स्वीकार करो।'

'मैं क्यों स्वीकार करूँ यह बासी लाल फूल?'

'मिस कोयल, मैं तुमसे प्रेम करता हूँ और लाल गुलाब किसी लड़की को पार्क में देना प्रेम का पहला सिग्नल है।'

'लेकिन, तुम्हारे सिग्नल देने के पूर्व ही गाड़ी तो निकल गई! कान खोल कर सुन लो, मैं तुमसे प्रेम नहीं करती हूँ...मैंने ट्रैक चेंज कर लिया है। मैंने प्रेम की मंडी में जो नया शिकार किया है, उसे मेरी पायल की झंकार फटाफट समझ में आ जाती है। वह है प्रेम गली सत्तर का बड़ी जेब वाला असत्यवान, पुत्र नेताजी दोहक प्रसाद...वह मेरे सपने नहीं देखता, बस मेरे सपने पूरे करने के लिए एटीएम जैसा काम करता है...वह मेरे नाम पर आहें नहीं भरता, बल्कि मेरे लिए गीतों भरी रात आयोजित करता है...वह मुझे याद करते हुए अपने घर की छत नहीं देखता, बल्कि जीवन का रिस्क लेकर मेरी छत पर चला आता है...वह मुझे रात-दिन क्विक सेवा प्रदान करता है।..ऐसा निराला और चोखा है मेरा नया फ्रेंड, कान और भौं कुंडलधारी असत्यवान... तुम्हारी तरह वह दिन में सपने नहीं देखता और कल्पना के लोक में जा कर मुझसे नहीं मिलता बल्कि हकीकत में हमेशा मेरे करीब होता है...उसके चार-चार गर्ल फ्रेंड हैं...और वह सब को मेंटेन करता है...तुम्हारी तरह वह लड़कियों की भाषा से अनजान नहीं है...'

'मिस कोयलए एक बार मेरे लिए तुम अपने हृदय की धड़कनों को सुनो...तुम अपने हृदय की धड़कनों को साफ-साफ सुन सको, इस उद्देश्य से मैं अपने पशु डाक्टर भाई का आला चुरा कर लाया हूँ...साथ ही, धड़कनों को डिकोड करने वाला यह विशेष वेदेशी मशीन भी साथ लाया हूँ...प्लीज मेरे लिए... अपने दिल की धड़कनों को सुनो, उनको डिकोड करो, वे जरूर मेरे नाम का जाप कर रहीं होंगीं...'

'अरे, मूर्ख दिल-विल कुछ भी नहीं सुनता-सोचता है... सुनने, सोचने और समझने का सारा काम तो दिमाग करता है... तुम तो मेरी पायल की आवाज नहीं सुन सके और चले हो मुझसे प्रेम का नाटक करने। देखो, तुमने जो पैसे मुझे चाट-वाट खिलाने और गिफ्ट-सिफ्ट देने में खर्च किए, उसके लिए धन्यवाद और आगे मुझसे मिलने की कोशिश मत करना। यह तुम्हारे फायदे लिए कह रहा हूँ। याद रखना, मेरा नया प्रेमी गजराज सिंह बॉक्सर है...'

साहब, मैं फास्ट गोइंग किस्सागो हूँ और मैंने भी, जमाने के फास्ट लाइफ में, प्रथम, द्वितीय और तृतीय प्रेम के टूटने का दर्द देखा है। सबसे बुरा तो प्रथम प्रेम के टूटने का दर्द होता है और माडर्न वर्ल्ड में सत्यव्रत जैसे प्रेमी को लड़कियाँ लूजर कह कर अपमानित करती हैं। उसे ब्लैक लिस्टेड कर देती हैं और लूजर के लिए नई कहावत है। जो एक की नजर से गिराए वह सबकी नजर से गिरा...'

साहब, अपने प्रथम प्रेम के टूटने पर सत्यव्रत ने बहुत करीने से सोचा, 'असल में बात यह है कि मुझे किसी के हृदय में छिपे सत्य को पढ़ना नहीं आता है। मुझे हृदय में कैद सत्य को पढ़ने की कला सीखनी होगी और फिर मैं अपनी दूसरी प्रेमिका की तलाश में शहर की हर गली में जाऊँगा। मैं इस कला को सीखने के लिए हिमालय की किसी ऊँची चोटी पर जाऊँगा और हठ योग करूँगा...घनघोर तपस्या करूँगा। भगवान् से वरदान लूँगा कि मुझे हर गली के लोगों का सत्य दिख जाए...और यह वरदान मुझे जैसे ही प्राप्त हो जाएगा, मैं अपनी द्वितीय प्रेमिका और उसके परिवार

के लोगों का हृदय आसानी से पढ़ पाऊँगा, समझ पाऊँगा...'

साहब, मैं प्रेम रोग से डरने वाला किस्सागो हूँ। मैं प्रेम-व्रेम के बारे में ज्यादा नहीं जानता हूँ, लेकिन मेरे दादा ने मुझे बताया था कि घायल प्रेमी और घायल बाघ में, तुलनात्मक रूप से घायल प्रेमी कम ताकतवर लेकिन ज्यदा घातक होता है। इसके बाद, घायल प्रेमी सत्यव्रत हिमालय की एक चोटी पर घनघोर तपस्या में लीन हो गया। इन्द्र का लोक डोलने लगाए काँपने लगा। इंद्र के दरबार की अप्सराओं ने भयवश नृत्य का कार्यक्रम पेश करना बंद कर दिया।

देवताओं को रिफ्रेश होने का एक मात्र कार्यक्रम भी बंद हो गया था। इंद्र बहुत दुखित हो उठे थे। उन्होंने समस्त देवताओं के साथ मिल कर ईश्वर की प्राथना की, 'हे ईश्वर, घायल प्रेमी सत्यव्रत ने अपनी तपस्या से मेरे इंद्र लोक को प्रकंपित कर दिया है। मेरे दरबार की अप्सराएँ नृत्य नहीं कर पा रही हैं और उनके बिना काम किए, यानी बिना नृत्य पेश किए, मुझे अपने राज कोष से उनको वेतन देना पड़ रहा है। सीएजी श्रीचित्रगुप्त अपनी रिपोर्ट में मेरे ऊपर विपरीत टिप्पणी कर सकते हैं...उनके द्वारा मुझ पर भ्रष्टाचार का भयानक आरोप लग जा सकता है। उनके पास शून्य की खान है और वे बिना हिचके कुछ अंकों के आगे शून्य की लंबी लाइन लगा देते हैं और भ्रष्टाचार का खतरनाक मूल्यांकन कर सकते हैं। वर्ल्ड रिकार्ड बना सकते हैं। उनके द्वारा निर्धारित भ्रष्टाचारी अंकों पर विपक्ष के नेता स्वामी राक्षसानंद घनघोर राजनीति शुरू कर सकते हैं। इंद्र पद से मेरे त्यागपत्र की माँग कर सकते हैं...हे भगवन! आप हमें सत्यव्रत रूपी मुसीबत से मुक्ति दिलाएँ...'

इन्द्र सहित समस्त देवताओं की प्रार्थना को सुन कर अनाम भगवान सत्यव्रत के सामने उपस्थित हुए और कहा, 'हे पुत्र सत्यव्रत, तू अपनी मनोकामना मुझे बता दे...'

'हे भगवान, पहले आप मुझे अपनी पहचान बताएँ। आप कौन से भगवान हैं। हमारी पृथ्वी पर अनेक भगवानों की चर्चा होती रहती है और मैं कन्फ्यूज्ड हो जाता हूँ...साथ ही, आप मुझे अपने पावर्स और बैंक एकाउंट के बारे में बता दें, तब मैं आपसे निश्चिंत हो कर वरदान मांगूंगा...मैं बिना टारगेट देखे फायर नहीं करना चाहता हूँ...मैंने वरदान देने वाले भगवानों की कथा पढ़ी है... इसमें कभी-कभी घपला हो जाता है और वरदान पाने वाले के लिए वरदान ही शाप बन जाता है और बेमौत मारा जाता है...'

सत्यव्रत का तर्क सुन कर, अनाम भगवान कुपित हो उठे और बोले, 'अरे मूढ़, अब मैं तुमको वरदान नहीं दूँगा। मैं तुमको श्राप दे रहा हूँ। जाए तू जिस गली में प्रवेश करेगा, उस गली के लोगों का सच तू जान जाएगा और उस सच को तू सबके सामने उजागर करने लगेगा। और इस कारण तू हर गली में पिटेगा। किन्तु तू ने कठोर तपस्या की है, इस लिए पिटाई से तुम्हारी मृत्यु नहीं होगी।'

साहब, मैं तो एक छुटभैय्या किस्सागो हूँ...लेकिन, जैसा मैंने जाना वही बांच रहा हूँ...देखिए, श्राप पा कर सत्यव्रत की क्या सुन्दर प्रतिक्रिया थी...उसकी प्रतिक्रिया बिल्कुल निराली थी... ऐतिहासिक थी...अजीब थी...अचंभित करनेवाली थी।

'हे अनाम भगवान जी, आपने जो श्रेष्ठ श्राप मुझे कृपा कर दिया है, वही मैं वरदान में आपसे माँगने वाला था। आप धन्य हैं। अब मैं आपके द्वारा दिए गए श्राप से शक्ति युक्त हो कर, अपने शहर की हर गली में अपनी दूसरी सच्ची प्रेमिका की तलाश करूँगा...आपको शतकोटि प्रणाम!'

हब, मैं भाग्य वाचन करने वाला किस्सागो नहीं हूँ, लेकिन मुझे लग रहा है कि श्राप से शक्ति सम्पन्न सत्यव्रत अपने अभियान में सफल हो जाएगा। उसे इस युग में भी दूसरी सच्ची प्रेमिका मिल जाएगी। और साहब, इसी श्राप से युक्त होने के बाद सत्यव्रत गलियों में जाने लगा और पिटने लगा। उसे पिता और गुरु के कारण सत्य बोलने की बीमारी नहीं लगी, यह बात सिर्फ मैं जानता हूँ और अब आप जान रहे हैं...उसने सच बोलने की बीमारी तपस्या कर, श्राप रूप में अर्जित की और इस बीमारी से ग्रस्त हो कर वह बहुत गदगद हो गया था।

साहब, सत्यव्रत ने निन्यानवे गलियों का मार्मिक दौरा कर लिया था, लेकिन उसे उसके जीवन की दूसरी सच्ची प्रेमिका नहीं मिल पाई थी। साहब, मैं तो तिनके के सामान किस्सागो हूँ... मेरा धैर्य तिनके की तरह हलकी हवा के झोंके से उड़ जाता है...मुझमें सत्यव्रत जैसा धैर्य होता तो मैं भी आज शादी-सुदा होता...खैर, अपनी किस्मत को कोसना छोड़ कर मैं स्टोरी को आगे बढ़ाता हूँ-

सत्यव्रत ने सौंवी गली में प्रवेश करने की योजना बना डाली। यह सौंवी गली बहुत ही खतरनाक गली थी। लोग इसे मौत की गली भी कहते थे। लेकिन, प्रेमी तो आग की गली में जाने से नहीं डरते हैं। फिर, सत्यव्रत तो श्राप की शक्ति से युक्त था और गली में उसकी मौत भी अनाम भगवान की कृपा से प्रतिबंधित थी। वह सौंवीं गली में प्रवेश करने से क्यों डरता? वह कोई आम आदमी या पुलिस थोड़े था कि वह सौंवी गली के दादा गलादबोच से डर जाता। उसने अपनी सौंवी गली की यात्रा धूमधाम से नरक चौराहे से शुरू की। कवि कामुकानन्द जी ने हरी झंडी दिखा कर, सत्यव्रत को सौंवी गली में जाने का आशीष दिया।

साहब, सौंवीं गली के प्रवेश द्वार पर ही दादा गलादबोच जी

के पट्ठों ने सत्यव्रत को धर दबोचा और उसके मुँह पर टेप लगा दिया। फिर लगे उसकी धुनाई करने। उसकी धुनाई होते देख कर, गली से बलिष्ठ लड़कियों का एक झुण्ड निकला। लड़कियों ने दादा गलादबोच जी के पट्ठों पर आक्रमण कर दिया। एक लड़की ने सरकारी मुलाजिमों की कृपा से, वर्षों से खराब पड़े चापाकल के हैंडिल से दादा गलादबोच जी के दो पट्ठों को पीट कर भूलुंठित कर दिया। सारे पट्ठे भाग निकले। लड़कियों ने सत्यव्रत के मुँह पर लगे टेप को हटा दिया और कहा, 'परम प्रिय सत्यव्रत, तुम्हारा हमारी गली में स्वागत हैं।'

साहब, सत्यव्रत तो आश्चर्य के सागर में मछली कि तरह डुबकियाँ लगा रहा था। लड़कियों की वीरता को देख कर, सत्यव्रत हैरान था...यह सिचुएशन उसके लिए बिल्कुल अनूठी सिचुएशन थी। उसने मन ही मन सोचा, 'इस गली की लड़कियों नेए मेरे लिए दादा के पट्ठों की ठुकाई कर दी। मुझे फ्रीडम ऑफ स्पीच यानी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की सुविधा दी। ये लड़कियाँ तो सचमुच कमाल की हैं और लोकतंत्र तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की हिमायती हैं। काल की तरह बलिष्ठ हैं। पुरुषों से श्रेष्ठ हैं...और अब, इस गली की लड़कियों को क्या मैं बहन कह कर संबोधित करूँ? अगर मैं उनको बहन कहकर संबोधित करता हूँ तो मेरे पास एक ही विकल्प रह जाएगा कि मैं संन्यास ले लूँ...नहीं मैं न तो उनको बहन कहूँगा और न मैं उनसे बात ही करूँगा...मैं अब यहाँ से भाग चलूँ तो मेरे लिए उत्तम होगा...इनमें से मैंने किसी को अपनी प्रेमिका के रूप में पा भी लिया तो विवाह के बाद मेरी हड्डियों की क्या हालत होगी, मैं कह नहीं सकता हूँ...' और यह कर सत्यव्रत उस गली से विपरीत दिशा में लगभग दौड़ता हुआ चल पड़ा।

साहब, मैं तो निर्मोही किस्सागो हूँ...फिर भी मैं सत्यवत के भाग्य पर रो पड़ा। अब उसके सामने आजीवन कुँवारा रहने की स्थिति थी। आजाद रहने की स्थिति थी। बेलगाम रहने की स्थिति थी। और इस युग में किस पुरुष को बेलगाम रहने से बहुत मुश्किलों का सामना करना पड़ता है...समाज की हस्तियाँ ऐसे पुरुष को अनुभवहीन मानती हैं और उसके आगे घास नहीं डालती हैं...श्रेष्ठ पुरुष तो वही होता है जो लगाम में रहते हुए, बेलगाम होने की योग्यता रखता हो, जैसे अश्लिलानंद ब्राघवेंद्र, जैसे कवि कामुकानन्द जी...दोनों अनेक बार विवाह करने के बाद भी यहाँ वहाँ चोंच भिड़ाते रहते हैं...साहब, अब देखिए, आगे सत्यव्रत को मिले श्राप का कमाल।

सत्यव्रत को गली की विपरीत दिशा में जाते देख कर, लड़कियाँ उसके पीछे दौड़ पड़ीं। उनमें से एक धाविका पवनिका ने सत्यव्रत को अपनी मजबूत बाहों में दबोच कर, अपनी सहेलियों से कहा, 'हे सखियो, अब यह सत्यव्रत सात जनम तक मेरी बाँहों से भाग कर नहीं जा सकता है। मैं इसे अपनी बाँहों में दबोचा कर, गली में उसी प्रकार प्रवेश करूँगी जैसे बाली ने रावण को अपनी बाँह में दबोच कर उसे लंबी यात्रा कराई थी।'

साहब, यह तो इस किस्सागो के लिए चमत्कार के सामान था...पवनिका की बाहों में कैद, सत्यव्रत ने ऊँची मगर प्रेम पूरित आवाज में कहा, 'हे पवनिका, मैं भी तुम्हारी बाँहों से अगले सात जनम तक मुक्त नहीं होना चाहता हूँ। मैं तुम्हारी ही खोज कर रहा था...मुझे बस दो पल के लिए अपनी बलिष्ठ बाँहों से मुक्त करो ताकि मैं अनाम भगवान से एक छोटी सी मगर प्रैक्टिकल प्रार्थना कर सकूँ...'

साहब, मैं तो किस्सागो होकर भी इस सिचुअशन पर हतप्रभ था...देखिए, प्रेम के बोल से आनंदित पवनिका ने क्या कहा।

'हे सत्यव्रत, तुम अनाम भगवान से प्रार्थना कर लो...मैं तुमको धरती पर उतार रही हूँ, सिर्फ और सिर्फ अपने लिए...'

साहब, मैं तो आप लोगों की दया से किस्सागो हूँ...अब क्या बताऊँ, सत्यव्रत ने धीमे स्वर में जो प्रार्थना की, उसे सिर्फ मैं ही सुना पाया।

'हे अनाम भगवान, आपको शत कोटि प्रणाम...आपके द्वारा दिया गया श्राप मेरे लिए शुभ सिद्ध हुआ और उसने मेरे अभियान को सफल बना दिया...अब मुझे इस श्राप का लाभ नहीं चाहिए... कृपा कर यह उत्तम श्राप वापस ले लें ताकि मैं भी आम लोगों की तरह काल के अनुरूप सत्य या असत्य बोल सकूँ और अन्य विवाहित पुरुषों की तरह अनेक कोमलांगियों के साथ आँखें चार कर सकूँ...व्यावहारिक जीवन जी सकूँ, जैसे साहित्यकार अश्लिलानंद बाघवेंद्र और कवि कामुकानन्द जी रसिक जीवन जीते हैं... कितना उन्मुक्त हैं... अपराध बोध से हजारों मील दूर... बस गिनती गिनते हैं कि जीवन में कितनी कलियाँ आईं और कितनी गईं...मुझे अपराध बोध से मुक्त जीवन चाहिए...मैं गन्दी गलियों के निवासियों की तरह अपने सत्य से डर कर नहीं जीना चाहता हूँ...'

अनाम भगवान ने कहा, 'एवमस्तु! मैं कलियुग में असत्य बोलने और अधिकाधिक प्रेम करने के अधिकार से, स्त्री या पुरुष, किसी को भी वंचित नहीं करना चाहता हूँ...वे अनेकानेक प्रेम-कांडों के नायक-नायिका बनें...उन पर फिल्मों का निर्माण हो... नमकीन-मीठी फिल्में बनें...जाओ और युगानुरूप आचरण करते हुए जीवनयापन करो...'

सम्पर्क– 423, न्यू नागर टोली, रांची-834001 (झारखंड)

यह भी ठीक, वह भी ठीक

प्रेम जनमेजय

बात उन दिनों की है जब मध्यम वर्ग के लिए कार एक सपना हुआ करती थी। कुछ के सपने साकार हो जाते हैं, कुछ के निराकार रहते हैं। निराकार सपने आत्महत्या कराते हैं। कुछ को कार मिल जाती है और कुछ की बेकारी बरकारार रहती है।

उन दिनों स्कूटर की अपनी शान थी। लड़की पटाने से लेकर बढ़िया दहेज जुटाने तक काम में आता था। स्कूटर पर बैठे आदमी की इज्जत का सैंसेक्स बढ़ जाता था जैसे पांच सितारा होटल में जाने वाले या इंट्रव्यूह में झर्राटेदार अंग्रेजी बोलने वाले का बढ़ता है। पूरी फैमली स्कूटर के हर हिस्से पर ठुस जाती और महसूसती जैसे पुष्पक विमान में विराजमान है। घर के हर सदस्य का सहारा इकलौता स्कूटर होता। आजकल.... घर के हर सदस्य की अपनी-अपनी कार परिवार को बेसहारा किए है।

तो उन दिनों, हमारे कॉलेज के प्रिंसिपल स्कूटर की शाही सवारी पर आते थे। एक दिन देखा, अपने स्कूटर के सामने बैठे स्टैंड पर ताला लगा रहे हैं जैसे कुछ संसद में बैठ ईमानदारी को ताला लगाते हैं।

— आपने भी ताला लगवा लिया?'

— हँ जी, बहुत जरूरी है। देखो जी बिना ताले के स्कूटर खड़ा हो तो कोई भी चाबी लगाकर स्कूटर स्टार्ट करे और ले जाए।

— पर चोर तो स्टैंड वाले ताले की भी चाबी बनाकर उसे खोल सकता है?

— बिल्कुल जी चोरों के सामने ताले क्या! उनके पास तो 'मास्टर की' होती है। वो गाना है न जी, बड़ा ही सी आई डी है नीली छतरी वाला, हर ताले की चाबी रखता हर चाबी का ताला।

— ऊपरवाला सी आई डी होता है? मुझे तो लगता है कि जो सत्ता में सबसे ऊपर पहुँचता है, वो सी आई डी रखता है। उसके पास हर ताले की चाबी होती है। जिसकी चाहे फाईल खोल ले।

— मेरा तो फिल्मी गाना था और आप कर रहे हो ऊँची राजनीतिक बात। दोनों अपनी-अपनी जगह ठीक हैं।

— पर ताले की चाबी कैसी भी हो, ताला खोलने में टाईम तो लगेगा। पहले चोर नीचे झुकेगा, फिर ताला खोलेगा। उसके बाद स्टार्ट करने की चाबी लगाएगा। टाईम डबल लगेगा।

— यह मारा, डबल टाईम में तो चोर पकड़ा जाएगा। ताला लगाना ठीक ही है।

— पर टाईम से पता न चला तो, ताला लगाना बेकार गया न।

— बिल्कुल ठीक, ताला लगाना बेकार गया।

— फिर आपने क्यों लगा लिया?

— बच्चों ने कहा तो मैंने टाल दिया पर जब पत्नी ने कहा तो टाल नहीं सका। पत्नी तो हाईकमांड होती है न। पर जब भी ताला खोलने या बंद करने बैठता हूँ तो डर लगा रहता है कि कोई नस न खिंच जाए। डाक्टर बेड रेस्ट बोले और बिस्तर पर ही सब कुछ न करना पड़ जाए।

— तो मैं ताला न लगवाऊं?

— रहने दो जी!

— ताले से मन को तसल्ली रहती है।

— तो लगवा लो जी।

कर्णधार देश को चौराहे पर छोड़ते हैं उन्होंने मुझे छोड़ दिया।

इन दिनों एक साहित्यकार 'मित्र' मिल गए। वे सच्चे साहित्यकार हैं क्योंकि उनके पास एक ठो कार है। वे सक्रिय साहित्यकार हैं। वे फेसबुक, व्हाट्स एप्प, ट्यूटर के रात-दिनी साहित्यकार हैं। जब चाहें गर्दन झुकाकार आप इन यार की उपस्थिति देख सकते हैं। इससे पहले उनको साहित्यिक कब्ज रहती थी। कोई उनकी रचना पर बात नहीं करता, अपनी पसंद जाहिर नहीं करता... इस कारण कब्जियाते रहते। डॉक्टर ने जब से उन्हें फेसबुक, व्हाट्स एप्प, ट्यूटर का त्रिफलाचूर्ण दिया है उनकी अभिव्यक्ति के द्वार खुल गए हैं। बार-बार लगातार वाले इस्टाईल में वे अपनी चमकार बिखेरते रहते हैं। प्रतिदिन दिन में कम से कम चार-पाँच बार वे सोशल मीडिया पर ज्ञान-मुद्रा में अवतरित होते हैं। उनकी पुस्तकें लेटकर, बैठकर, खड़े होकर आदि अनेक सार्वजनिक मुद्राओं में पढ़ने वाले पाठकों के चित्र साझा होते हैं।

मैंने पूछा– 'क्या हो रहा है?'

वे बोले– 'हैं... हैं... अब और क्या होना है, लेखन के मजदूर हैं, साहित्य हो रहा है।'

– पर हर समय तो साहित्य नहीं हो सकता। पापी पेट को भरने और खाली करने का भी तो समय चाहिए।

– ये आपने बिल्कुल सही कहा।'' उनकी आँखें मेंढक-सी फैल गईं।

– पर साहित्य में पूरा समय नहीं देंगे तो मान सम्मान कैसे मिलेगा? साहित्यकार के लिए तो साहित्य ही प्राथमिकता है।

– बिल्कुल सही। मान-सम्मान और पुरस्कार साहित्य को समय देने से ही तो मिलेंगे।

– पर आजकल तो सब जुगाड़ से मिलता हैं।

– बिल्कुल ठीक, सब जगह जुगाड़ चलने लगा है।

– पर कुछ तो जेनविन होते हैं। आपको भी तो पिछले दिनों मिला, जेनविन।

– पर 'उसे' जो मिला जुगाड़ से मिला। बहुत ही खराब लिखता है।

– खराब तो लिखता है... अच्छे साहित्य की समझ नहीं है।

– उसकी कुछ रचनाएँ तो बढ़िया हैं, शायद उनपर मिला हो।

– उन्हीं पर मिला होगा। उसकी दो तीन किताबों की मैंने तो समीक्षा की है।

– आपकी साहित्यिक दृष्टि एकदम साफ है।

– हैं... हैं... आपकी भी तो...

ऐसे सज्जन साँप की तरह बल खाते हैं। इनकी कुटिया सत्ता के गलियारों में छवी रहती है। इनका नख-शिख सत्ता की कड़ाही में होता है। इन सगुणवादियों का मस्तक प्रभु समक्ष सदा नवा रहता है। ये बुरा देखने जाते ही नहीं, इसलिए इन्हें 'बुरा न मिलया कोय।' इनकी नाक दुर्गंध नहीं सूंघती है इसलिए कूड़े और इत्र की गंध, सुगंध समान होती है। ये भैंस के आगे बीन बजाकर उसे प्रसन्न करने की कला जानते हैं। इनका अधिक सेवन अच्छा तो लगता है पर मधुमेह होने का खतरा रहता है।

कुछ सदाबहार सहमतिए हैं तो कुछ सदाबहार असहमतिए। ये केवल स्वयं से सहमत होते हैं। हर समय दुर्वासा की मुद्रा में रहते हैं। यह हर संबंध तराजू में तोलते हैं। किसी को मिल जाए तो रुष्ट, स्वयं को मिले और कम मिले तो रुष्ट। कोई ग्रहण करे न करे ये श्राप बांटते रहते हैं।

मैं आज तक कन्फयूजाया हुआ हूँ, ग़ालिब से पूछता हूँ– 'तुम्हीं कहो कि ये अंदाज़े-ए-गुफ़्तगूक्या है।' पर ग़ालिब क्या बोले, उसकी तो जुबान काट दे गयी है।

सम्पर्क– 73, साक्षर अपार्टमेंट, ए-3, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-110063 मो. 9811154440

...पृष्ठ 4 का शेष

हिंदी दिवस के अवसर पर इन कटियाबाजों की खूब पूछ होती है। बेचारे बैंक वाले, रेलवे वाले, बीमा वाले आदि नहीं जानते कि असली साहित्यकार कौन है और कटियाबाज कौन है। उन्हें तो हिंदी दिवस की मुसीबत से छुटकारा पाना होता है। दरअसल हिंदी दिवस पर हिंदी की 'हिंदी' करने में इन कटियाबाजों को महारत हासिल है। इनका 'मोटो' साहित्य कभी रहा ही नहीं, ये तो समारोहों के दूल्हे हैं। ज़्यादा दहेज की इन्हें दरकार कभी नहीं रही। इन्हें तो एक शाल, एक माला और समारोह के चंद फोटो चाहिए होते हैं जिन्हें फेसबुक पर शेयर कर सकें। हिंदी पखवाड़े में ये समारोह-दर-समारोह जीमण करने निकलते हैं।

जैसे आजकल भिंडी की बोन्साई किस्म उगाई जा रही है जिसमें भिंडी सेम साइज़ की होती हैं, उसी तरह हिंदी में कटियाबाज लेखकों की किस्म है। पाठक चूंकि पढ़ता-लिखता नहीं सो इन साहित्यकारों के लेखन का स्वाद नहीं जान पाता। इनके शहरों में वर्ष भर साहित्यिक समारोह होते हैं, इसलिए इनकी प्रासंगिकता पर कभी प्रश्न चिन्ह नहीं लगता। ये इसी तरह हिंदी देवी की आराधना करते हैं। सबकी पूजा पद्धतियाँ अलग-अलग होती हैं, इसलिए इन्हें हिंदी की उपासना का पूरा हक है। ये कभी-कभार हमें भी समारोह में बुला लेते हैं, इसलिए इतना लिखने के बावजूद हम इनकी हिंदी सेवा के मुरीद हैं।

सम्पर्क–मेहरा कॉलोनी शिकोहाबाद 283135 उप्र

हम समुद्र को बचाना चाहते हैं

ब्रजेश कानूनगो

नमक को लेकर हम लोग बहुत चिंतित रहते हैं। एक कवि ने तो कहा भी है कि हमें समुद्र को बचाना चाहिए क्योंकि सारा नमक वहीं से आता है। कवि समुद्र को बचाने की बात करता है। बड़ी बात करता है वह। यही दृष्टि उसे बड़ा और महत्त्वपूर्ण कवि बनाती है। साहित्य और कविता में ही नहीं, जीवन में भी नमक का बड़ा महत्त्व है। नमक के बिना सब बेस्वाद होता है।

डॉक्टरों का हमेशा जोर रहता है कि लोग नमक से परहेज करें। इनकी बातों में आकर कल कहीं नमक पर प्रतिबंध लगा दिया गया तो हम हिंदुस्तानियों का तो आधा खून ही सूख जाएगा। हमारे चेहरों की चमक और जोश इस नमक के कारण ही तो कायम है। नमक का विज्ञापन जब-जब टीवी पर आता है, मेरा रक्तचाप बढ़ने लगता है। पाँच रुपयों की वही नमक की थैली अब पच्चीस में जो मिलने लगी है। आप तो जानते ही हैं—हरेक वजनदार विज्ञापन हमारी जेब को हल्का बना देता है।

नमक का उपयोग अस्त्र के रूप में भी पर्याप्त रूप से किया जा सकता है। अगर आपको अपने विरोधी की कोई दुखती रग नजर आये तो उस पर तुरंत नमक रख दीजिए, वह तिलमिला उठेगा। उसका तिलमिलाना आपकी आत्मा को विशेष ठंडक पहुँचाएगा। केवल ध्यान इतना जरूर रखना होगा कि कहीं सामने वाला आपकी किसी दुखती रग या घाव न देख ले। क्योंकि पहले मारे सो मीर।

कुदरती तौर पर शरीर में भले ही मौजूद होता है, मगर 'नमक' तत्व भोजन से होते हुए जीवन में समाहित होता चला जाता है पहले जिह्वा पर उसके करिश्मे होते हैं, फिर हमारे संस्कारों और आचरण में भी लगातार उसके जलवे दिखाई देने लगते हैं।

चाट, पकौड़ी, कचोरी, समोसा, क्या बगैर नमक के इनकी कल्पना की जा सकती है? क्या बगैर नमक के जीवन में कोई आनंद है। वह लोग भी भला कैसे जीते होंगे जिन्हे नमक खाने से मना किया गया होता है। वह जीना भी कोई जीना है।

एक पड़ोसन जब दूसरी पड़ोसन से बात कर रही हो तब चुपके से ज़रा उसका आनंद लीजिए। मूल बात कैसी भी बोरिंग रही हो लेकिन नमक लगा लगा कर उसका बड़ा ही चटकारेदार स्वरूप सुनने को मिलेगा। अपने दफ्तर के बड़े बाबू से अपने बॉस की कोई कमजोरी पर बात करके देख लीजिए। फिर देखिये नमक का कमाल! दूसरे दिन आपको बॉस का प्रेम-पत्र मिलना सुनिश्चित है।

यह नमक बड़ा महा प्रतापी होता है। कई टीवी चैनल इसी की वजह से छाये रहते हैं और अपनी रोजी-रोटी को बनाए रखते हैं। एक चैनल के संपादक को इसलिए निकाल दिया गया कि वह खबरों में पर्याप्त नमक नहीं लगा रहा था। बाद में एक युवा रिपोर्टर को वरिष्ठ सम्पादक बना दिया गया क्योंकि वह पहले नमक इकट्ठा करता था, फिर थोड़ी सी खबर भी नमक के साथ प्रसारित कर देता था। नमक बड़ा ताकतवर होता है तथा किसी भी व्यक्ति को उठा-गिरा सकता है।

एक मंत्री महोदय ने अपने एक निकट संबंधी अफसर का स्थानांतरण उपजाऊ क्षेत्र में करवा कर उसको एवं उसके परिवार वालों को नमक प्रदान किया। बाद में उन्हीं मंत्री महोदय के सत्ता से बाहर हो जाने पर अफसर ने मंत्रीजी के परिजनों को जहाँ-तहाँ नौकरियाँ देकर नमक का हक अदा कर दिया। नमक अपना हक मांगता है। कोई नमकीन समोसा खिला कर अपना काम करवाना चाहता है तो आप उसे निराश कर ही नहीं सकते।

नमक का उपयोग अस्त्र के रूप में भी पर्याप्त रूप से किया जा सकता है। अगर आपको अपने विरोधी की कोई दुखती रग नजर आये तो उस पर तुरंत नमक रख दीजिए, वह तिलमिला उठेगा। उसका तिलमिलाना आपकी आत्मा को विशेष ठंडक पहुँचाएगा। केवल ध्यान इतना जरूर रखना होगा कि कहीं सामने वाला आपकी किसी दुखती रग या घाव न देख ले। क्योंकि पहले मारे सो मीर।

चारों ओर नमक का साम्राज्य दिखाई देता है। लोगों के लिए अलग-अलग धर्म स्वैच्छिक और निजी आस्था के भले ही हो सकते हैं, मगर 'नमक का धर्म' सभी में व्याप्त है। इसीलिए नमक को बचाने की चिंता में हम समुद्र को बचाना चाहते है।

संपर्क– 503, गोयल रिजेंसी, चमेली पार्क, कनाड़िया रोड, इंदौर 452018, मो 9893944294

हैकर्स/टैगर्स/हैंगर्स

मीना अरोड़ा

ज्ञानी–'हम अच्छे खासे इंसान से सोशल मीडिया के हैंगर कब हुए पता ही नहीं चला। जिसे देखो वह हम पर अपनी कविता कहानियाँ विचार लेख प्रकाशित अप्रकाशित पुस्तकें उनके कवर पेज, चित्र, ऑडियो, वीडियो सब टाँग देता है। और तो और कभी-कभी अनदेखे, अनजाने लोगों की श्रद्धांजलि का जिम्मा भी हमारे नाजुक कंधों पर आन पड़ता है। नोटिफिकेशन पेज का हृदय भी सहानुभूति से भर सिसकियाँ लेने लगता है। और हम न चाहते हुए भी दिन भर गमगीनी की गीली चादर ओढ़ लेते हैं। ऐसा लगता है मानो कोई सगे वाला सरक गया हो।'

अज्ञानी–'सही कह रहे हो। पिछले दिनों एक मित्र ने अपने पुत्र के जन्मोत्सव का चित्र टैग कर दिया। जन्मदिन से एक रात्रि पूर्व प्रकाशित किया गया वह चित्र कई दिनों तक बधाई, अनछुए केक, सजावटी उपहारों से फलता फूलता रहा।

चौथे दिन मित्र का फोन आया नाराज होकर बोला–क्या बात, भतीजे के लिए गिफ्ट लेकर भी नहीं आ सकते। उसके पैदा होने पर तो बड़ा झूम रहे थे।

हर समय फेसबुक पर 'जागते रहो के चौकीदार' की भूमिका निभाने वाले हम झूठ भी नहीं बोल सकते कि बर्थडे भूल गए।

ज्ञानी–'लोग जब दूसरे के टैग पर हमें अपने कमेंट और लाईक देते हैं तब हम सोचते हैं कि हम फेसबुकिया अलमारी के हैंगर बन चुके हैं।'

अज्ञानी–'फेसबुक पर तैनात मित्र–अमित्र, शिष्ट–अशिष्ट, सम्मानित साहित्यकार, सड़क छाप शायर टाइप के सहयोगी, सभी मानो हमारा नाजायज इस्तेमाल करने पर तुले हों।'

ज्ञानी–'हैकर्स और टैगर्स सोशल मीडिया पर मासूम लोगों के जानी दुश्मन बने बैठे हैं। हैकर्स से बचने के लिए एक बार को इंसान पासवर्ड बदल कर सिक्योरिटी चेक्स लगाकर चैन की सांस ले सकता है। और सोशल मीडिया पर जीने की कला पाकर इतरा सकता है। पर टैगर्स की चंगुल से बचना नामुमकिन होता है।'

अज्ञानी–'मेरे ख्याल टैगर्स लालची प्रवृत्ति के ऐसे जीव होते हैं, जिनका अपने खाने से, मतलब अपने परिचितों के लाईक और कमेंट से पेट नहीं भरता वो ज्यादा कमेंट और लाईक पाने के चक्कर में आपकी खुली खिड़कियाँ से अपने लिखे को घुसेड़ देते हैं।'

ज्ञानी–'अगर टैगर अन्जान है तो ब्लाक कर राहत की सांस ली जा सकती है। पर अगर मित्र, पड़ोसी या सरकारी कर्मचारी है तो आप मन मसोस कर रह जाते हैं। कुछ रोज पहले मैंने अपनी गली में रहने वाले छिछोरे विचारों से ओतप्रोत बिजली विभाग के एक अधर्मी से फेसबुक पर सम्बन्ध विच्छेद कर दिया उसने मेरे घर के सारे कनेक्शन काट दिये। हार कर मेरे पूरे परिवार को उससे क्षमा मांग उसे अपना सोशल मीडिया मित्र घोषित करना पड़ा।'

अज्ञानी–'अगर सोशल मीडिया पर आपने अपने टैगर्स को समझाया या चेतावनी दी तो वो विलेन बन जाते हैं। और फिर दे दनादन अपने रोष को व्यक्त करने के लिए पहले से अधिक अश्लील चित्रारोपण आरंभ कर देते हैं। या आपको अन्फ्रेंड कर देते हैं।'

ज्ञानी–'जरूरी नहीं कि आप टैगिरया डिसीज से पीड़ित हों कई बार तो फेसबुक पर चित्रारोपण करने वाले, गूढ़ ज्ञान रोपने वाले, अपने विचार थोपने वाले, भी आपकी नाक के बाल नोचने लगते हैं कि उनकी पोस्ट पर लाईक या कमेंट करें नहीं तो...

अज्ञानी–'नहीं तो, क्या?'

ज्ञानी–'नहीं तो, आपके वॉल-चित्रारोपण पर कोई जल नहीं चढ़ायेगा, और आपका वॉल वृक्ष सूख जाएगा।'

अज्ञानी–'सच है भाई, इन्हीं दुविधाओं के चलते हम खुद ही कई बार वॉक आउट कर गये। पर फिर नजर घुमा कर देखा तो पास के सोफे पर बैठी हमारी संतानें हमारा जन्मदिन फेसबुक पर मनाया रहीं थीं।

सोशल मीडिया पर सजे केक और उपहार बेकार न चले जायें यह सोचकर हम फेसबुक पर हैंगर बनने को लौट आये। चलिए टैग कर लीजिए आपको जो भी टैग करना है। हम टैगू माफिया के सामने नतमस्तक हैं।'

संपर्क– पत्नी श्री सुनील अरोड़ा
हिमालय फार्म, बरेली रोड, हल्द्वानी-263139 (नैनीताल)
उत्तराखंड

पांडेय जी बन गए लेखक

लालित्य ललित

पांडेय जी ने भी सेटिंग नाम का शब्द सीख भी लिया और शहद के स्वाद की माफ़िक समझ भी लिया।

हुआ क्या कि पांडेय जी की लॉटरी निकल गई। पाँच करोड़ रुपये की तब से आला अखबार, फ़लाने न्यूज चैनल पीछे ही पड़ गए कि इलाके के फेमस हलवाई विलायती राम पांडेय की लॉटरी निकल गई।

पूरे महल्ले में तूफान मच गया। जहाँ कहीं निकल जाते तो भीड़ जमा हो जाता।

रामखेलावन पुराने आशिक थे, इलाके के हलवाई के। सच्ची क्या इमरती, क्या जलेबी बनाता है कि लाइन लगती है, कसम से।

रामखेलावन ने ही सुझाव दिया कि आप आजकल बाउंसर लेकर चला करो।

पांडेय जी पूछ बैठे कि ये किस बला का नाम है!

रामखेलावन ने कहा कि अब आप इलाके के कद्दावर सम्मानित व्यक्ति हो गए।

देखिए शहद की तरह शब्द जो असर करते है उससे मधुमेह होने का खतरा बना रहता है। इलाके के सम्मानित हलवाई और अब लेखक विलायती राम पांडेय की भूमिका में विरोधाभास है, एक तरफ समाज को मीठा मुँह करा रहे है और दूसरी तरफ सामाजिक चेतना से सराबोर लेखक समाज को नई दिशा से मार्ग भी सुझा रहे है।

क्या कहना चाहते है कि इलाके में मेरा नाम पहले नहीं था! पांडेय जी बोल पड़े।

अरे! भाई साहब वह बात नहीं। पहले भी आप जाने पहचाने व्यक्ति थे। अब आपकी लॉटरी निकल आई है। कई लोग पीछे पड़ जाएँगे। कुछ लोग बहाना खोजते है, आप समझा कीजिये।

अच्छा! तो तुम्हें जो ठीक लगे, वह करो।

पांडेय जी के साथ छह बाउंसर लगा दिए गए। वे जहाँ जाते, वे बाउंसर साये की तरह पीछे रहते।

हलवाई की दुकान पर अब अतिरिक्त भीड़ लगी रहती कि इलाके का ऐसा कौन सा हलवाई है जो भारी सुरक्षा में इमरती बना रहा होता।

अब तो स्थानीय अखबारों में जलेबी बनाते हलवाई पांडेय जी की तस्वीर आती तो बाउंसर खड़े दिखते।

पांडेय जी का सामाजिक जीवन कट सा गया।

सोचने लगे कि लॉटरी से पहले ही ठीक था। कम से कम लोगों से मिलने की आजादी तो थीं। ये बड़ा आदमी बनने के लोचे भी बहुत है और घाटे भी।

जिसे देखो वह आजकल पांडेय जी को ऐसे देखता की हमारे इलाके में कोई छुट्टा सांड आ गया या भप्पी लहरी स्माइल पास कर गया।

बहरहाल जब आदमी कुछ अलग से दिखाई देने लगे तो उसके अलग तरह के चक्षु दिखने लगते है। पांडेय जी के साथ भी यही हुआ, आजकल अपनी भावनाएँ पांडेय जी व्यक्त करने लगे थे।

वे कुछ भी देखते, फौरन लिख देते। रामखेलावन ने उनमें फूँक भर दी। कि आप क्या लिखते है! गजब करते है।

रोजाना लिखिये। क्या रचनात्मकता है आपमें! वल्लाह।

सरस्वती का सीधे आपको आशीर्वाद मिला है। पांडेय जी फूल कर कुप्पा हो गए। तुरन्त दुकान से रसमलाई मंगवा दी और छैना मुर्गी। रामखेलावन को खाने का शौक था और प्रशंसा करने का। यहाँ सामान आया और वहाँ रामखेलावन फुर्र!

इधर पांडेय जी ने लिख लिख कर कापियाँ सान दी। रामखेलावन ने इलाके के बड़े लेखक प्रोफेसर राधेलाल जी को गोंद के लड्डू देकर पटा लिया। वे आसानी से पट भी गए। एक उम्र के बाद पटाना आसान हो जाता है। यह प्रसंग स्त्री-पुरुष दोनों ओर वैलिड है।

राधेलाल जी ने पांडेय के कविता संग्रह की भूमिका लिखी–

देखिए शहद की तरह शब्द जो असर करते है उससे मधुमेह होने का खतरा बना रहता है। इलाके के सम्मानित हलवाई और अब लेखक विलायती राम पांडेय की भूमिका में विरोधाभास है, एक तरफ समाज को मीठा मुँह करा रहे है और दूसरी तरफ सामाजिक चेतना से सराबोर लेखक समाज को नई

दिशा से मार्ग भी सुझा रहे है।

विरोधाभास इसलिए कहा कि मिठाई बनाना इनका पेशा है और लेखन इनकी अभिरुचि।

ऐसे अवसर कम मिलते है जब इस तरह का व्यक्ति दोनों ही फ्रंट पर एक योद्धा की तरह तटस्थ भाव से लड़ रहा हो।

मैं अपनी समस्त शुभकामनाएं विलायती राम पांडेय को देना चाहूँगा कि ये भविष्य में भी रचनात्मक रहें और समाज को नई दिशा दिखाते रहें।

हस्तक्षर

प्रोफेसर राधेलाल

गली साक्षरा, बालाजी अस्पताल के सामने

बहुत बढ़िया लिखा है आपने–ऐसा रामखेलावन ने कहा। और कुछ ही देर में पांडेय जी ने एक किलो गाजर का हलवा, एक किलो काजू और दो किलो नमकीन के पैकेट प्रोफेसर साहब के घर भिजवा दिए।

राधेलाल खुश थे, कि उम्र के इस पड़ाव पर आकर रामखेलावन नामक भगत मिला, जिसके चलते ये दिन देखने को मिला।

मिसेज राधेलाल भी खुश नजर आई, डाइनिग टेबल पर अनेक थैलियाँ मुस्करा रही थीं। नहीं तो अब तक टोकती ही रहतीं कि क्या मजमा जमा कर रहते हो!

जब विलायती राम पांडेय के कविता संग्रह का लोकार्पण मंडी हाउस के सामने त्रिवेणी सभागार में तय हुआ।

मंच सजा हुआ था। लोग आने शुरू हो गए। सजे धजे। झकास टाइप।

इतने में रामखेलावन मंच पर माइक लिए नजर आए।

कहने लगे कि आप सब का बहुत आभार। कार्यक्रम से पहले जलपान पर आपका हार्दिक स्वागत है।

सबसे बड़ी बात यह है कि आजका जलपान देसी घी से बना हुआ लेखक विलायती राम पांडेय जी की स्वीट्स शॉप से आया है।

थोड़ी देर में जलपान करने वाले करीब दौसों लोग थे।

आधा घण्टे बाद रामखेलावन फिर मंच पर थे। उन्होंने एक एक कर मंचस्थ अतिथियों को बुला लिया।

चिलमन देख रहा है कि मंच पर मधुबाला है, चेलेराम है, लपकुराम बाहर गाँव है, उनकी जगह कोई और विद्वान है। प्रोफेसर राधेलाल जी के नाम पर उपस्थित जनसमूह ने करतल ध्वनि से स्वागत किया। प्रोफेसर रामलुभाया जी भी है। किसी मंच पर अंतरराष्ट्रीय स्तर के दो विद्वान आ जाये तो समारोह वैसे ही सफल मान लिया जाता है।

रामखेलावन ने मंच की कार्रवाई के लिए युवा स्वर सुश्री मधुबाला को बुलाया।

मधुबाला ने साड़ी पहनी है। आँखों में काजल है। वह आई और सधी आवाज में सबको सम्बोधित करते हुए सम्मोहक वाणी में कहा–

आज का दिन हमारी संस्था चेतना इंडिया के लिए शुभ समाचार लेकर आया है। कि राजधानी दिल्ली के मशहूर लेखक विलायती राम पांडेय के कविता संग्रह 'तुम बिन' का लोकार्पण समारोह है। जो मित्र यहाँ मौजूद है, उनको बताना चाहूँगी कि पांडेय जी एक बड़े हलवाई है जिनकी मिठाईयाँ देश के साथ विश्व के कई देशों में भेजी जाती है। अभी हाल ही मैं इनकी पाँच करोड़ की लॉटरी भी निकली है। जोरदार तालियाँ बजाते हुए आइये हमसब मिलकर इनका स्वागत करते है।

पूरा सभागार तालियों से गूँज गया।

संस्था की ओर से मंचस्थ अतिथियों को पश्मीने का महंगा शाल ओढ़ा कर सम्मान किया गया। राधेलाल से रामलुभाया बोले–भैया, बुलवा लिया करो। आजकल कोई याद नहीं करता। शाल तो महँगा दिख रहा है। जीएजी। रामखेलावन का झोल है। इसी ने ही आमन्त्रित किया और कहानी भी इसी ने बनाई। आजकल वैसे ही हमारी मार्किट का शेयर कब फलच्कयुट कर जाता है, हमको भी खबर नहीं रहती। हम्म! ये बात है।

पांडेय जी भी मंच पर आ गए। उनके पीछे उनके बाउंसर ने अपना स्थान ले लिया।

रामलुभाया जी, राधेलाल जी ने मिलकर पांडेय के कविता संग्रह का लोकार्पण करने के लिए मूड बना लिया था कि मधुबाला बोल पड़ी कि इस शानदार मौके पर मिसेज पांडेय का होना और मंच पर आना बनता है। जैसे ही मिसेज पांडेय का पदार्पण हुआ तो संग्रह का लोकार्पण हुआ।

रामलुभाया जी ने कहा कि मैं तो व्यंग्य का आदमी हूँ, पर कविताओं से शुरुआत मैंने भी की थी, रात में इस संग्रह को देख गया, पलट गया और सीधा भी किया। नीचे रामखेलावन को लग रहा था कि रामलुभाया जी कहीं कुछ और न बोल बैठे। बड़े लेखकों का पता नहीं होता कि कई बार वे कुछ का कुछ बोल जाते है।

बहरहाल रामलुभाया जी ने कहा कि इनकी कविताओं में समाज का प्रतिबिंब है जो साफ दिखाई देता है कि लेखक की भावनाएँ कितनी स्वच्छ है और मौलिकता से भरी हुई है। मैं

इनको बधाई और साधुवाद देता हूँ कि भविष्य में और भी कृतियों को पाठकों के सम्मुख लेकर आने का प्रयास करें।

रामलुभाया जी के बाद प्रो. राधेलाल ने कहा कि मैं इनका मुरीद तो तकरीबन चालीस वर्षों से रहा हूँ, तब से जब से इन्होंने मिठाईयाँ बनाना शुरू किया। कैसे इनके लेखन की मिठास इनके संग्रह में आई। रामखेलावन का शुक्रिया कि उन्होंने हमें यह मौका उपलब्ध करवाया और हम इतनी बेहतरीन रचनाएँ पढ़ पायें।

इस अवसर पर राधेलाल जी ने कुछ कविताओं के अंश भी सुनाए–

तुम बिन
मैं कुछ भी नहीं
सच कहूँ तुम मेरे जीवन का आधार हो
केंद्र बिंदु ही सही
संचालित करती हो मुझे
मैं ठहरा अनगढ़ चेहरा
तुम बिन
व्यर्थ हूँ।

सभागार एक बार फिर तालियों से गूँज गया। अंत में मधुबाला ने लेखक विलायती राम पांडेय को बुलाया।

उनको आता देख स्थानीय मीडिया, कैमरापर्सन एक्टिव मॉड पर आ गए। रामलुभाया जी राधेलाल से कह रहे है कि क्या जमाना आ गया कि मीडिया पांडेय को महत्व दे रहा है!

राधेलाल ने कहा कि रामलुभाया जी, आपको जो लिफाफा दिया गया है, उसमें इक्कीस हजार रुपये नगद है। धीरे बोलिये। कोई सुन लेगा। समझा कीजिए।

अरे! ऐसा है। तो चुप रहता हूँ।

आगे से याद रखा करो, राधेलाल जी।

मंचस्थ दोनों विद्वान मुस्कराते रहें।

अगले दिन के समाचार पत्रों में विलायती राम पांडेय के कविता संग्रह के लोकार्पण की खबर सचित्र प्रकाशित हुई थी।

रामखेलावन ने इस पूरे मामले में बड़ी मेहनत की थीं।व रना मीडिया किसी का सगा है क्या!

रामखेलावन ने सभी मीडिया कर्मियों को विशेष गिफ्ट बंधवा दिए थे। उसमें काजू कतली के डिब्बे थे और मार्ग व्यय का लिफ़ाफ़ा भी।

शाम को पांडेय जी रामप्यारी के साथ बैठे हुए थे, अदरक की चाय पीते हुए। कहा रहे थे कि देखा ये होती है पैसे की ताकत। मीडिया भी पीछे दौड़ता है, आज सारे अखबार और चेनल्स में हम ही है!

जी, देख रही हूँ। चीकू देख तो कैसे इतरा रहे है तेरे पापा!

पापा जी। आज मेरा जन्मदिन है, आप मुझे साइकिल दिलवा दो, न!

मासूम सवाल था। पांडेय जी ने कहा कि बेटे, आज अपने शहर में सड़क ही कहाँ बची है! जहाँ तुम साइकिल चला सको। तुम्हें जल्द ऐसे रिजोर्ट में ले चलेंगे जहाँ खूब मस्ती करना। वहाँ साइकिल भी है, खूब चलाना। ऊँट भी है और स्वीमिंग पूल भी। खूब मस्ती करने का।

अच्छा!

पापा जी। आज मेरा जन्मदिन है, आप मुझे साइकिल दिलवा दो, न!

मासूम सवाल था। पांडेय जी ने कहा कि बेटे, आज अपने शहर में सड़क ही कहाँ बची है! जहाँ तुम साइकिल चला सको। तुम्हें जल्द ऐसे रिजोर्ट में ले चलेंगे जहाँ खूब मस्ती करना। वहाँ साइकिल भी है, खूब चलाना। ऊँट भी है और स्वीमिंग पूल भी। खूब मस्ती करने का।

एक हमारा जमाना था जब ट्यूबबेल चलता था और हम सब मस्ती कर आती थीं, मटर छीलते हुए रामप्यारी बोली।

गया अब जमाना, देवी। अब तो पॉल्यूशन है हमारा साथी। ध्यान पलटा तो डेंगू भैया तैयार खड़े।

पता है आज की खबर क्या है अब विदेशों में डिजानयर बच्चे भी होने लगे है। है राम!

रामप्यारी ने सोचा। आज तक डिजानयर कपड़े जरूर सुने थे, अब बच्चे भी होने लगे। आपके पास बैठना खतरे से खाली नहीं!

क्या क्या पढ़ते है और दुनिया जमाने को क्या क्या सलाह दिया करते हो!

ओ! महरा रामजी! कहते हुए रामप्यारी किचेन में दौड़ गई। चीकू तैयार होता हुआ नीचे उतर गया। स्कूल का टाइम हो गया था।

सम्पर्क– बी 3/43, शकुंतला भवन, ग्राउंड फर्स्ट फ्लोर, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-110063

एक शॉर्ट-सर्किट हमारे दफ़्तर में भी!

श्रवण कुमार उर्मलिया

हाल के वर्षों में अपने देश में शॉर्ट-सर्किट बड़ी तेजी से सक्रिय हुआ है। इसकी वजह से बहुमंजिली इमारतों में अक्सर आग लग जाया करती है। आश्चर्यजनक रूप से आग भी इमारत के उसी हिस्से में लगती है जहाँ महत्त्वपूर्ण दस्तावेज रखे होते हैं। आग लगने के बाद जब सब कुछ जलकर राख हो जाता है तब अग्नि-शमन दल मौका-ए-वारदात पर पहुँचकर बड़ी खूबी से आग पर काबू पा लेता है। इसके बाद बाकायदा आग लगने के कारणों की जाँच होती है, जिसमें हर बार बेचारा शॉर्ट-सर्किट गिरफ्तार कर लिया जाता है।

अब कुछ मूढ़ और शक्की किस्म के लोग तो हमारे समाज में होते ही हैं, जो इस शॉर्ट-सर्किट वाली थ्योरी को पचा नहीं पाते। ऐसे लोग कब्ज से पीड़ित होते हैं और ठीक से अपना खाना भी नहीं पचा पाते। ये लोग हो-हल्ला मचाते हैं कि दाल में कुछ काला है, आग जानबूझकर लगायी गयी है ताकि घपले वाले रिकॉर्ड नष्ट किये जा सकें। पर काफी छानबीन के बाद कहीं कोई भी प्रमाण नहीं मिलते और अंततः शॉर्ट-सर्किट ही दोषी पाया जाता है। ऐसे मूढ़ लोगों के लिए प्रस्तुत है हमारे दफ्तर की शॉर्ट-सर्किट कथा ताकि इन्हें शॉर्ट-सर्किट नामक शैतान की करतूतों पर भरोसा हो जाये–

'जो गर्व और खुशी 'हार की जीत' वाले बाबा भारती को अपना ऊँचा-पूरा घोड़ा देखकर होती रही होगी, कुछ वैसी ही खुशी छलकने लगती थी हमारे टकले और कुम्भकर्णी सूरत वाले बॉस के मुखमंडल पर जब वे अपनी व्यक्तिगत सहायक मिस चंद्रमुखी को देख लेते थे। बाबा भारती प्यार से अपने घोड़े की पीठ थपथपा सकते थे, स्नेह से उसे पुचकार सकते थे और सुबह.शाम उसकी सवारी कर सकते थे। दुर्भाग्य से हमारे खूसट बॉस को मिस चंद्रमुखी के मामले में ऐसी सुविधाएँ नहीं थीं जिससे उनके भीतर हीनता की भावना उत्पन्न होती थी। उस हीनता की घुटन से बचने के लिए बॉस मिस चंद्रमुखी को द्रौपदी के चीर जैसे लम्बे लम्बे डिक्टेशन देते थे ताकि मिस चंद्रमुखी का अधिकाधिक सान्निध्य पाया जा सके।

बॉस और मिस चंद्रमुखी के बीच भावनाओं और विचारों का तारतम्य अभी ठीक से जम नहीं पाया था, इसलिए दोनों ध्रुवों के बीच सर्किट पूरा नहीं हो पा रहा था। परिणामस्वरूप करेंट जो था वह दोनों के बीच प्रवाहित नहीं हो पा रहा था। हालांकि विभव (वोल्टेज) दोनों तरफ प्रबल होने की फ़िराक में लगे हुए थे। बॉस प्रयास कर रहे थे कि वे अपने पूरे हार्सपावर को वोल्टेज में बदल लें। इसके लिए वे अपने मातहतों को इतनी जोर से डाँटते थे कि मातहतों के द्वारा प्रसाधन-कक्ष का ज़्यादा से ज़्यादा उपयोग होने लगा था। बॉस का वोल्टेज बढ़ रहा था और लोग अटकलें लगा रहे थे कि जल्दी ही बॉस और मिस चंद्रमुखी के बीच विद्युत्-धारा प्रवाहित होने लगेगी।

परन्तु दो प्राणी रूपी ध्रुवों के बीच विद्युत्-प्रवाह क्या इतना आसान है? इतिहास साक्षी है कि जब भी पुरुष और नारी के बीच सर्किट पूरा होने लगता है, कोई न कोई विघ्नकारी बीच में घुसकर उत्पात मचाने लगता है। प्रेमी और प्रेमिका के बीच जुड़े हुए तार पर प्रेमिका का बाप कैंची चला देता है। बेटे-बहू के बीच पनपने वाले सर्किट का फ्यूज पत्नी की सास पूरी जिम्मेदारी से उड़ा देती है। इतिहास गवाह है कि हीर-राँझा, शीरी-फ़रहाद, ससी-पुन्नो, सोनी-महिवाल इत्यादि किसी भी जोड़े का सर्किट कभी पूरा नहीं हो पाया। कोई न कोई विघ्नकारी दालभात में मूसरचंद बनता ही रहा है हर प्रेम-प्रसंग में।

हमारे दफ्तर में भी इतिहास अपने आप को दुहराने लगा था। बॉस का मुँह लगा चपरासी था बाबू लाल जिसे अभिजात्य का टच देने के लिए प्यून कहा जाता था। एक दो बार उसे बिजली का झटका लग चुका था, इसलिए उसे वोल्टेज और करेंट से बहुत डर लगता था। जब उसे पता चला कि बॉस और मिस चंद्रमुखी के बीच करेंट बहने ही वाला है तो वह सर्किट को शॉर्ट करने के लिए तन-मन से तैयार हो गया। एक दिन वह सभी के सामने मिस चंद्रमुखी से बोला, 'चंद्रमुखी बाई जी, इत्ते लम्बे-लम्बे डिटेक्शन न लिया करो। सच्ची, इतना न थकाया करो अपनी काया को!'

मिस चंद्रमुखी हँसकर बोली, 'अरे बुद्धू, 'डिटेक्शन' नहीं, इसे 'डिक्टेशन' कहते हैं। पर तू क्यों परेशान होता है? तू तो बस बीड़ियाँ फूँक और हमें चाय पिलाता रह।' बाबू लाल ने सभी को सुनाकर कहा, 'हम क्यों परेशान होंगे, मैडम जी। हमको क्या करना है। अब तो जो कुछ करेगा, बॉस ही करेगा।'

सभी हँस पड़े तो मिस चंद्रमुखी को बुरा लगा। एक पिद्दी से चपरासी की इतनी मजाल! ऐसी जुर्रत उस नामाकूल की! मिस चंद्रमुखी के भीतर का वोल्टेज सुगबुगाया और बाबू लाल का कटाक्ष मीडियम-वेव पर बॉस के कानों तक पहुँच गया।

बॉस ने बाबू लाल को अपने केबिन में बुलाकर खूब हड़काया। बाबू लाल को बुरा तो लगना ही था। बॉस तो आते-जाते रहते हैं। चपरासी स्थायी होता है। बॉस के केबिन से गुस्से में भरा हुआ बाबू लाल निकला और तीर की तरह मिस चंद्रमुखी के पास पहुँचकर बोला, 'जे अच्छा नहीं किया तुमने, मैडम! इस लफंगे बॉस से तुमने मुझे डाँट खिलवायी है न? तुम समझती क्या हो मुझे? हम भी चपरासी हैं, चपरासी! हम कौनो अफ़सर नहीं हैं जो तुम्हारे बॉस से डरें! समझीं?'

इसके तुरंत बाद बॉस और चंद्रमुखी के बीच फिर रेडियो-लिंक स्थापित हुआ और अगले ही दिन बाबू लाल के नाम 'कारण बताओ' नोटिस जारी हो गया। बाबूलाल फिर मिस चंद्रमुखी से मुखातिब होकर बोला, 'मेरा सम्मन निकलवा दिया न उस उल्लू के पट्ठे से! मैडमजी, हो गयी तुम्हारी तसल्ली? अब देखो तुम दोनों कि मैं कैसे तुम दोनों की तसल्ली करता हूँ। ऐसा कारण बताऊँगा की वह टकला भी याद रखेगा और तुम भी!'

बाबू लाल का लिखित जवाब पा कर बॉस बौखलाया। मिस चंद्रमुखी भी धराशायी हुई। बॉस का नाम सीधे-सीधे मिस चंद्रमुखी से जोड़ा गया था। बॉस ने भी पैंतरा बदला। उसने मिस चंद्रमुखी से लिखित बयान ले लिया कि बाबू लाल ने उस (मिस चंद्रमुखी) के साथ बदतमीज़ी की है। और इसी आधार पर बॉस ने बाबू लाल को चार्ज-शीट दे दी। बाबू लाल ने फिर प्रेमपूर्वक मिस चंद्रमुखी को फटकारा, ''बड़ा ऊँचा खेल खेल रही हो, मैडमजी! डिटेक्शन के बहाने जब वह बुड्ढा दिनभर तुम्हें अपने केबिन में छेड़ता रहता है, तब तो तुमने कभी उसके खिलाफ़ लिखकर नहीं दिया? और मुझ जैसे इज्जतदार को मुफ्त में फंसवा रही हो? छेड़-छाड़ का असली मजा तो तुम अब लोगी, मैडमजी! मैं अब बदनाम तो हो ही चुका हूँ!''

इस बार बाबू लाल की तरफ से कर्मचारी यूनियन ने जवाब दिया। प्रबंधन पर बाबू लाल को परेशान करने के आरोप लगाये गए। बॉस पर आरोप लगा कि वह जब-तब मातहतों को गन्दी-गन्दी गलियाँ देता है। और बाबू लाल से वह दारू मंगवाता है। ईमानदार बाबू लाल जब कहता है की वह दफ्तर में दारू लाकर गलत काम नहीं करेगा तो बॉस उसे तंग करता है। पर बॉस भी हार मानने वाला नहीं था। उसने फिर चंद्रमुखी से लिखित में ले लिया कि बाबू लाल चंद्रमुखी को अब खुले आम आंख मारता है और उसे देखकर अश्लील हरकतें करता है। इतना ही नहीं, बल्कि उसने चंद्रमुखी को देख लेने की धमकी भी दी है और चंद्रमुखी की जान को खतरा है। इस आधार पर एक और चार्ज-शीट मिल गयी बाबूलाल को।

इस बार बाबू लाल मिस चंद्रमुखी के सुन्दर चेहरे पर बीड़ी का धुआं फेंकते हुए बोला, 'बहुत ही भोली हो तुम, मैडम। मेरे से पंगा ले रही हो, तो सावधान रहना। तुम्हें तो नहीं पर तुम्हारे खूसट बॉस को जरुर मारूँगा! मेरी नौकरी जाये या रहे, पर मैं तुम दोनों के बीच कभी भी कनेक्शन पूरा नहीं होने दूँगा, समझी? जाके कह दो अपने टकलू बॉस से।'

इस बार यूनियन ने भी बाबू लाल से लिखवा लिया और जवाब में लिखा कि असल में धमकी तो बाबू लाल जैसे मेहनती और ईमानदार कामगार को बॉस ने दी है। बॉस से उसकी व्यक्तिगत सहायक मिस चंद्रमुखी की इज्जत को खतरा है और बाबूलाल एक जागरुक नागरिक होने के नाते एक बहन की इज्जत बचाना चाहता है। इसीलिए बॉस बाबूलाल से बहुत चिढ़ता है और उसे धमकाता है। यूनियन ने जवाब की एक कॉपी लेबर कमिश्नर को भी भेज दी।

किसी भी दफ्तर में जब इस तरह के आरोप-प्रत्यारोप का सिलसिला चल निकालता है तो टी.वी. के विज्ञापनों की तरह कभी खत्म ही नहीं होता। दफ्तर में मिस चंद्रमुखी-बाबू लाल प्रकरण द्रौपदी के चीर की तरह खिंचता चला जा रहा था। देखते ही देखते इस दफ्तरी प्रकरण की फाईल भी बहुत मोटी हो गयी थी। उस प्रकरण में कभी बॉस-चन्द्रमुखी का पलड़ा भारी हो जाता और लगता कि उनके बीच करेंट का सर्किट पूरा हो ही जायेगा और साथ ही बाबू लाल की रोजी-रोटी ख़तरे में पड़ जाएगी। कभी लगता कि यूनियन की वजह से बाबू लाल भारी पड़ रहा है और बॉस-मिस चंद्रमुखी नप जायेंगे।

आखिर यूनियन की सलाह पर खेल खत्म करने के लिए बाबू लाल ने पैंतरा बदला। उसने घोषणा की कि चंद्रमुखी जैसी बहन की इज्जत बचाने के लिए और बॉस की ज्यादतियों के खिलाफ़ वह दफ्तर-परिसर में आत्मदाह करेगा। बात प्रशासन और प्रेस तक पहुँचा दी गयी। मामला गंभीर हो गया। बॉस का वोल्टेज थोड़ा कम हुआ। लगा कि वह समझौते के मूड में आ गया है। उधर इस वातावरण को थोड़ा अमली जामा पहनाने के लिए मिस चंद्रमुखी ने अपना मेक-अप और सज-श्रृंगार कम कर दिया। अब वह बॉस की व्यक्तिगत सहायक कम, उनकी बेटी ज्यादा नजर आने लगी।

शेष पृष्ठ 26 पर...

चार लघु-व्यंग्य

संतोष त्रिवेदी

योजना

परसाई–वत्स! तुमने हमें निराश किया है।

त्रिवेदी–कैसे गुरुदेव? क्या चूक हो गई इस साहित्याधम से?

परसाई–तुमने हमें पढ़ा है?

त्रिवेदी–जी, आपसे ही तो सीख ली है। उसी का अनुसरण कर रहा हूँ।

परसाई–मगर मैं तो लिखता था, योजनाएँ नहीं बनाता था। तुमने यह कहाँ से सीखा?

त्रिवेदी–लिखता तो मैं भी हूँ गुरुदेव! करीब-करीब रोज लिख रहा हूँ, पर केवल इसी से साहित्य के करीब नहीं पहुँचा जा सकता। योजनाएँ बनानी पड़ती हैं। सरकार भी बनाती है।

परसाई–योजना का क्या चक्कर है, जरा खुलकर बताओ।

त्रिवेदी–सरकार पाँच साल टिकने के लिए पंचवर्षीय योजना लाती है। फिर भी उसका पाँच साल टिकना दूभर हो जाता है। यह तो साहित्य की गली है। सोशलमीडिया की घुसपैठ हो गई है। यहाँ दैनिक रूप से लेखक की रेटिंग चढ़ती-उतरती है। इसलिए इससे निपटने के लिए दैनिक योजनाएँ लानी पड़ती हैं।

परसाई–तो तुम क्या साहित्य में निपटने के लिए आए हो?

त्रिवेदी–नहीं, नहीं। वो तो हम सुबह-सुबह ही घर में कर लेते हैं। यहाँ तो हम निपटाने आए हैं। अभी कल ही दो युवा लेखकों और एक निष्ठुर आलोचक को निपटाया है। तभी से तीन वरिष्ठ मेरे गले पड़े हैं।

परसाई–अपने आचरण में तुमने यह किससे सीखा? मेरे लेखन का साइड-इफेक्ट ऐसा होगा, नहीं पता था।

त्रिवेदी– आप चिंता न करें गुरुदेव। आप केवल मेरे लेखन पर बोलें, आपका मान बढ़ता रहेगा। नहीं तो...?

परसाई–नहीं तो क्या? मैंने लिखकर हड्डियाँ तुड़वाई हैं। मुझे डर नहीं है। मैं तो तुम्हारी हड्डियों की चिंता कर रहा हूँ।

त्रिवेदी– ओह! इसकी चिंता आप कतई न करें। आप संत थे, मैं संत नहीं हूँ। साहित्य के डॉक्टर भी बता चुके हैं कि मुझमें हड्डियाँ नहीं हैं। इसीलिए तो मैं इतना लचीला हूँ!

परसाई–फिर कोई बात नहीं। तुम्हारी अंतिम योजना क्या है वत्स?

त्रिवेदी–यही कि मेरे हाथों आपको मोक्ष-प्राप्ति हो गुरुदेव! बग्घी पर सवार होकर आपकी आत्मा शहर के बीचोंबीच से निकले ताकि सभी व्यंग्य-प्रेमियों को आपकी मुक्ति पर पूर्णतः भरोसा हो जाय। यही हमारी आखिरी योजना है।

परसाई–अब मैं पूरे भरोसे के साथ फिर से मरता हूँ। साथ ही यह वरदान देता हूँ कि सब मरेंगे, केवल त्रिवेदी बचेगा।

दाने

कबूतर– भाई साहब, कुछ दाने हमें भी डाल दो!

कौआ– क्यों, क्या हुआ? आपका स्टॉक खत्म हो गया?

कबूतर– क्या बताऊँ! पिछले दिनों धूर्तों ने मौका पाकर मेरे बैंक में सेंध लगा दी। दानों का सारा स्टॉक लूट ले गए।

कौआ– कोई बात नहीं। आप हमारे आदरणीय हैं। बताइए क्या चाहते हैं?

कबूतर– मुझे कुछ और नहीं चाहिए। नई फ़सल के दो-चार दाने डाल दिया करो बस!

कौआ–इत्ती-सी बात! इसके लिए आपको मुझे कंधा देना होगा। मुझे वरदान मिला है कि उस पर चढ़कर जब बीट करूँगा, तभी दाने झरेंगे। आप उन्हें ही चुग लेना।

कबूतर– यह अनमोल वरदान आपको कैसे हासिल हुआ भाईसाहब?

कौआ– लम्बा किस्सा है। बात उन दिनों की है जब हम भूखों मर रहे थे। तभी नारद को चिंता हुई। हमारी दशा देखकर वे हमारे सामने प्रकट हुए। उन्होंने हमें वरदान दे डाला कि जब भी हम धूर्तता देवी का आह्वान करेंगे, दाने ही दाने पैदा होंगे। मगर इसके लिए दूसरे के कंधे का सहारा लेना पड़ेगा।

कबूतर– आप बड़े दयालु हैं,संत हैं भाई साहब!

कौआ– मैं संत नहीं हूँ, जयंत हूँ। हम त्रेता युग से चोंच मारते आ रहे हैं। मेरे साथ रहो, चोंच मारो, दाने चुगो। हाँ, बस कंधा मजबूत रखना। और एक बात याद रखना। अब युग बदल गया है। त्रेता में ज्ञान कबूतरों के पास था। यह कलियुग है। अब वह हमारे पास है।

कबूतर– समझ गया भाईसाहब! कंधों की चिंता तो करो

ही मत। मेरा अतीत गवाह है। मैं प्रेम से कंधा देता हूँ। कब किसको देना है, इसका ज्ञान अच्छे से है मुझे।

कौआ– तो चलो फिर!

कबूतर– कहाँ?

कौआ– चोंच मारने।

बहना

व्यंग्य– क्या हाल है?

कविता– तू अपना हाल देख। तेरे यहाँ ज़्यादा लट्ठ चल रहा है।

व्यंग्य– वो कैसे?

कविता– विधा बनाने पर उतारू कुछ लोग इसे साहित्य से विदा करने पर तुले हुए हैं।

व्यंग्य– ऐसी बात तो मेरे संज्ञान में नहीं है। हम तो दैनिक योजनाएँ निकाल रहे हैं। अभी बहुत कुछ करना है।

कविता– तभी कह रही हूँ। तुमने अपने दल में, सॉरी योजना में उन्हें भी शामिल कर लिया है जो हमारे यहाँ कुछ नहीं चुग पाए।

व्यंग्य– ग़लत बात। हम डस्टबिन में भी सम्भावनाएँ देख लेते हैं। हमें तो तीन बुजुर्गों में भी संभावना के तीव्र लक्षण दिखाई दे रहे हैं।

कविता– वो कैसे?

व्यंग्य– अरे बहन, उनसे ही तो हमारे सम्मान की संभावना बनती है।

कविता– फिर तो तुम वाकई मुख्य धारा में हो। तुम्हें बहनें से यह बहन भी नहीं बचा सकती

फ़ॉलोअर

भूमिका– कैसी हो बहन?

समीक्षा– कुछ नहीं बस तेरे झाँसे में आ गई।

भूमिका– कैसे?

समीक्षा– हमने सोचा कि जब तुमने लेखक को अद्वितीय कह दिया है तो मैंने भी अद्‌भुत कह दिया।

भूमिका– फिर इसमें दिक्कत क्या हुई?

समीक्षा– दिक्कत ये है कि जिस लेखक की किताब को अद्‌भुत कहा था, वही अब मेरी निष्ठा संदिग्ध मान रहा है।

भूमिका– ठीक तो है। साहित्य में संदिग्ध बने रहने में ही भलाई है। सभी विकल्प खुले रहते हैं। इसलिए मैंने भूमिका के साथ डिस्क्लेमर लगा दिया था कि इसकी वैधता लिखने के दिन तक ही है। छपने के बाद मेरी कोई जिम्मेदारी नहीं है।

समीक्षा– यानी हमारे बचने का कोई रास्ता नहीं है?

भूमिका– ऐसा करो तुम अपनी बात पर डटे रहो। बस सबको बता दो कि 'अद्‌भुत' में श्लेष अलंकार का प्रयोग किया था। बात रह जाएगी।

समीक्षा– शुक्रिया। इसीलिए मैं आपकी फ़ॉलोअर हूँ।

ए जे 3/78ए, पहली मंजिल, खिड़की एक्सटेंशन, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017 / मोबाइल 9818010808

....पृष्ठ 24 का शेष

एक दिन मिस चंद्रमुखी बाबू लाल से उदास हो कर बोली, 'बाबू लाल भैया, इस बहन की इज्जत को और कितना उछालोगे, बोलो तो? एक प्यारे भाई का आत्मदाह मैं कैसे देख पाऊँगी?' कहते हुए मिस चंद्रमुखी की आँख में पानी आ गया। बाबू लाल ठहरा चपरासी। अपनी बीवी के उदास होने पर वह चाहे कभी न पिघला हो, पर मिस चंद्रमुखी के सामने वह मोम बनकर बोला, 'अब तो इस भाई की नौकरी तुम्ही बचा सकती हो, बहना। बॉस से कहो कि वह जमीन पर आ जाये और मैं भी सभी कुछ भूल जाने को तैयार हूँ।'

इस तरह दफ्तर में बॉस, मिस चंद्रमुखी, बाबू लाल और यूनियन सभी मामले को रफा-दफा करने को तैयार हो गए। पर मामला रफा-दफा हो कैसे? केस की मोटी फाईल बीच में टांग अड़ाने लगी। विद्वान कहते हैं कि आवश्यकता ही अविष्कार की जननी है। माईकल फैराडे ने विद्युत् का अविष्कार कर डाला पर उसने सपनों में भी नहीं सोचा होगा की आगे चलकर सर्किट की जगह शॉर्ट-सर्किट ज्यादा उपयोगी सिद्ध होगा। यह शॉर्ट-सर्किट भ्रष्टाचार के निवारण में अपना पूरा सहयोग देगा और भ्रष्टाचार में लिप्त फाईलों का दाह-संस्कार कर वातावरण को निर्मल और सात्विक कर देगा।

अचानक एक शाम दफ्तर के सर्किटों में करेंट बढ़ गया था। शॉर्ट-सर्किट की वजह से आग लग गयी जिसमें कई महत्वपूर्ण दस्तावेज जल गए। बाबू लाल की फाईल को तो जलना ही था। फाईल जली तो बॉस, मिस चंद्रमुखी, बाबूलाल और यूनियन सभी की 'भूल-चूक लेनी-देनी' हो गई।'

आशा है यह वृतांत पढ़कर उन तमाम शक्की मूढ़ों की तसल्ली हो जाएगी जो शॉर्ट-सर्किट की क्षमता पर शक करते हैं।

सम्पर्क–श्रवण कुमार उर्मलिया, 19/207 शिवम् खंड, वसुंधरा, गाज़ियाबाद-201012/मो. 9868549036

कबूतर की घर वापिसी

सुभाष चन्दर

पाठको, आज आपको एक कहानी सुनाता हूँ। यह कहानी एक कबूतर की है।

कबूतर बूढ़ा हो रहा था। पक्का काम धंधा कुछ था नहीं। मजदूरी करने मतलब दाना चुगने कही जा नहीं पाता था। आसपास के कबूतर लोग भी उसे दुत्कारते थे। उनसे छोटी जात का जो था। कबूतरी, बच्चे सब परेशान थे–खाएँगे क्या? पास में ना थे दाने, कबूतरी क्या जाती भुनाने? सब परेशान कि कबूतर जब कहीं जाएगा ही नहीं तो सब खायेंगे क्या? घोंसला चलेगा कैसे?

एक दिन उसका पड़ोसी कौआ आया। उसने कबूतर की हालत देखी, उसे तरस आया। कबूतर ने उसे सारी राम कहानी सुनाई। काम धंधे का रोना रोया, घोंसले में उगे भूख के पौधे दिखाए, दिल पर पड़े पड़ोसियों के तानो के चाबुक के निशान दिखाए। कौए की आँखों में चमक आ गयी, जुबान में सैकरीन घोलकर, उसने कबूतर से कहा, 'देख भाई कबूतर परेशान मत हो, तेरी परेशानियों का एक इलाज है तो मेरे पास। मेरी माने तो तू अपने मजहब को बेच दे। अच्छे से दानापानी का जुगाड़ हो जाएगा, तेरे दिन तो क्या रातें भी सुधर जाएगी।'

एक दिन उसका पड़ोसी कौआ आया। उसने कबूतर की हालत देखी, उसे तरस आया। कबूतर ने उसे सारी राम कहानी सुनाई। काम धंधे का रोना रोया, घोंसले में उगे भूख के पौधे दिखाए, दिल पर पड़े पड़ोसियों के तानो के चाबुक के निशान दिखाए। कौए की आँखों में चमक आ गयी, जुबान में सैकरीन घोलकर, उसने कबूतर से कहा, 'देख भाई कबूतर परेशान मत हो, तेरी परेशानियों का एक इलाज है तो मेरे पास। मेरी माने तो तू अपने मजहब को बेच दे। अच्छे से दानापानी का जुगाड़ हो जाएगा, तेरे दिन तो क्या रातें भी सुधर जाएगी।'

कबूतर पहले चौंका फिर उसने सोचा– भूखों मरने से तो बेहतर है कि मजहब बेच ही देते हैं। मजहब ससुर क्या खाने को दाना, पीने को पानी देता है। रोज कमाना, रोज खाना, बाकी सब कुछ झूठा बाना। बदल लेते हैं मजहब। मजहब का क्या है?

कुछ देर सोचकर उसने हाँ कर दी!

कौए ने उसकी 'हाँ' आगे पास कर दी! अगले दिन ही कुछ ठेकेदार कबूतर आ गए।

हरी टोपी, साफ मूँछें, लंबी दाढ़ी वाले। वे आये, आते ही उन्होंने कबूतर को समझाया, 'मियाँ कबूतर, अभी तक तू जिस मज़हब में पड़ा था,वो बड़ा खराब था, थर्ड केटेगरी का था। हमारे पास आएगा तो फर्स्ट क्लास बन जायेगा। हमारे यहाँ सब बराबर हैं। हमरा मजहब ब्राह्मण, बनिया, राजपूत, जाट, गुज्जर, शूद्र–वूद्र नहीं मानता, सबको बराबरी का अधिकार देता है, तू हमारी का बराबरी का हो जाएगा, हम तुझे फ्री का भाईचारा देंगे साथ में दाना देंगे, पानी देंगे'। वो भी बिलकुल मुफ्त।

उसे सोचता देखकर एक दाढ़ी बड़बड़ाई, 'मियाँ कबूतर सोच मत, हम तुझे चार शादियाँ करने का मौका भी देंगे।' फिर दूसरी दाढ़ी ने आँख मारी और बोली, 'भाई कबूतर देर मत कर, जल्दी से हाँ कर दे। तेरी कबूतरी वैसे भी बूढ़ी हो गयी है, जब चाहे कबूतरी बदल लीजो।'

कबूतर ने फिर सोचा। कबूतरी को देखा, बच्चों को देखा, घोंसले की जीर्णशीर्ण अवस्था देखी, फिर पीठ से लगे अपने पेट को देखा, उसके बाद दाढ़ी की बताई सुविधाएँ देखी। सुविधाएँ यकीनन भारी थी। 'हाँ' करना तो जैसे लाचारी थी।

कबूतर ने कबूतरी से मिस्कोट की। कबूतरी को बस चार कबूतरी रखने वाले मामले पर ऐतराज था। कबूतर ने समझा दिया, 'इस बुढ़ापे में भला कहाँ की चार शादी!' तुझे संभाल लूँ, वही बहुत है। ऐसी ही कुछ बातें कीं, कसम–धरम खाई, कबूतरी मान गयी।

कबूतर ने हाँ कर दी।

बस दाढ़ियाँ खिलखिला पड़ीं। कबूतर को मुबारकबाद दी। उसे बाजरे से भरा बोरा दिखाया, पानी का मटका दिखाया, नया घोंसला दिखाया। दानो में कबूतर चोंच मारने ही वाला था कि लम्बी दाढ़ी बोली, 'रुक... थोड़ा रुक, मियाँ कबूतर...सब मिलेगा, पहले थोड़ा काम निपटा लें।'

एक दाढ़ी ने कलमा पढ़वाया, दूसरी ने उसके घोंसले में रखी मूर्ति–शूर्तियाँ हटाईं। तीसरी ने उसका नाम बदल दिया।

कबूतर की कुछ समझ में नहीं आया। वह टुकुर–टुकुर

बाजरे के बोरे को ही देखता रहा।

उसके बाद शोर मचा... लो भाई कबूतर मुसलमान हो गया। ठेकेदार कबूतर ने अपनी बही में नोट किया–एक काफिर कम हुआ, एक मुसलमान बढ़ गया।

अब कबूतर मुसलसल ईमान वाला यानी मुसलमान हो गया।

इसके बाद सब उसे नए मजहब के कायदे कानून सिखाकर चले गए। साथ ही ये ताकीद भी कर गए– 'देख मियाँ, गलती से भी काफिरों का संग साथ मत करियो, वे कतई अच्छे ना हैं।

उनके जाते ही कबूतर मय कबूतरी और बच्चों के अनाज के बोरे पर टूट पड़ा। खूब पेट भर दाना खाया, साफ पानी पिया, रात को कबूतरी के संग आशिकी भी झाड़ी।

अगले दिन से काम भी मिल गया। काम था– सेल्समैनी का। अपने जैसे कबूतरों की पहचान करना, उन्हें दुकान तक लाना, बाकी काम दाढ़ी वाले दुकानदारों का।

सारा मामला सही चल रहा था। पर कहते है ना कि भरे पेट अंघाई सूझती है सो कबूतर को भी अंघाई सूझी। वह पुराने कबूतरों से बराबरी के स्तर पर बात करने लगा। औरों की गलत बात काटने लगा, अपनी बात पुरजोर तरीके से रखने लगा। पर वह रखता ही तो था,उसकी सुनता कौन था?

एक दिन किसी बात पर एक पुराने मुसलमान कबूतर से उसका पंगा हो गया। पंगा बढ़ गया। पुराना कबूतर बोला, 'अबे चल बे, तू कल का आया कबूतर, हमारे बराबर कैसे हो सकता है?'

कबूतर ने गुस्से में जोर जोर से गुटरगूं की और गर्दन पकड़ ली पुराने वाले कबूतर की। पुराने कबूतर ने पहले अपनी गर्दन छुड़ाई और फिर चोंच को हिला-हिला कर बोला, 'क्या बे साले, दो कौड़ी के, अपनी औकात भूल गया। अबे बोरा भर बाजरे में बिकने वाले नामाकूल, तू हमसे टक्कर लेगा, तेरी औकात क्या है?

कबूतर का पेट भरा था,भरे पेट में भी आत्मसम्मान जोर न मारे तो भरे पेट का फायदा क्या? अपना कबूतर भड़क गया, चोट सीधी कलेजे में लगी। कुछ देर लड़ा, फिर वह उदास हो गया।

कबूतरी ने लाख पूछा प्यार से, दुलार से...रूठकर... पर कबूतर चुप, बच्चे भी परेशान हो गए। हारकर कबूतरी पड़ौसी कौव्वे के पास पहुँची, कबूतर की उदासी का राज उससे शेयर किया, कौआ भागा-भागा आया। उसने हालचाल पूछा। कबूतर की आँखों में आँसू आ गए. आँसुओं के साथ ही बात भी आ गयी। कौआ समझदार था बोला, 'चिंता क्यों करता है? वो मजहब पसंद नहीं तो दूसरा ले ले। मेरी माने तो मजहब को फिर बेच दे। दुगुना दाना पानी दिलवाऊँगा, बस तू हाँ कर दे।'

कबूतर ने फिर सोचा। मजहब है, इसका क्या अचार डलना है, जितनी ज्यादा कीमत मिल जाये ठीक। वैसे भी दिल की चोट कसक दे रही थी, उसने हाँ कर दी।

इस बार बाजरे के दो बोरे मिले, पानी के घड़े तो चार मिल गए, हारी बीमारी के लिए डॉक्टर की सुविधा का आश्वासन भी।

अबकी बार सारी कार्यवाही चर्च में हुई। चर्च की साफ सफाई देख कर ही कबूतर का मन प्रसन्न हो गया। सफेद कपड़े वाले पादरी कबूतर ने चर्च में कुछ खाना पूरी कराई। हाथ में पवित्र किताब लेकर कुछ पढ़ा, कुछ उससे पढ़वाया। कबूतर के लिए काला अक्षर ठहरा भैंस बराबर। जैसे पादरी कबूतर कहता गया, वो करता गया अलबत्ता नजर उसकी अनाज के बोरों पर ही रही।

थोड़ी देर के बाद पादरी कबूतर ने घोषणा कर दी, 'बधाई ब्रदर कबूतर, अब तुम ईसाई कबूतर हो गया। दुनिया के सारे बड़े अमीर देशों के धर्म वाला। अब तुम्हारा सारा दुःख दूर हो जायेगा, तुम्हारे जीवन में खुशियों की वो फसलें उगेंगी कि तुम काट नहीं पायेगा, गॉड तुम्हारा कल्याण करेगा।'

कबूतर सुनकर खुश हो गया। उसने बाकायदा चर्च के चक्कर लगाये।

जाते-जाते सफेद कोटधारी कबूतर बोला, 'देखो ब्रदर कबूतर ...अब तक तुम जिस धर्म, मजहब रिलिजन में रहा, सब ख़राब था। हमारा रिलिजन बैस्ट है। इससे बढ़कर दुनिया में कुछ नहीं है, अब तुमको इसी धर्म में रहने का है,वापस पुराना धर्म का तरफ नहीं देखने का है, समझा। हम तुमको पैसा देगा, दाना पानी देगा, काम देगा, नया घोंसला देगा, सब देगा।' पादरी कबूतर ने कसम खिलाई, कबूतर ने दानों की तरह कसम भी चुग ली।

पर कहते हैं कि कबूतर का धर्म हो या कसम, इनका क्या बदलना, क्या ना बदलना।

कुछ दिन कबूतर सफेद कपड़े पहनकर मजे से चर्च गया।

नए घोंसले में यीशु, मदर मेरी की तस्वीर का जुगाड़ कर लिया। हर सन्डे को चर्च में प्रेयर करने भी जाने लगा। दाना पानी का जुगाड़, काम, सब चकाचक चल रहा था। पर जब भी कबूतर ईसाई कबूतरों में बैठता, वे सब उससे थोड़ी दूरी बनाकर रखते। डेविड नाम का कबूतर तो उसे देखकर मुँह दबाकर

हँसता। कबूतर अन्दर से झुलसता। उसे कहीं कुछ खटक रहा था। कुछ दिन बाद कबूतर को फिर उदासी के दौरे पड़ने लगे। कबूतरी ने देखा, घबरा गयी। मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक। कबूतरी कौए के पास पहुँची। एक दिन कौआ मिलने आया।

कबूतर ने कौए का स्वागत किया। कौए ने देखा कबूतर के पंख तो झक्क सफेद लग रहे हैं, पर त्वचा का मटमैला रंग अब भी कहीं कहीं झाँक रहा है। कौए की आँखों में चमक आ गयी। बोला, 'कबूतर ब्रदर, हम देखता है की तुम अबकी बार भी खुश नहीं लग रहा, फिर रिलीजन बदलने का है क्या?'

कबूतर उदास स्वर में बोला, 'अब कहाँ जाने का है भाई, अब क्या मजहब, मतलब रिलिजन बिकने को सकता?'

कौआ हँसा। बोला, 'कबूतर ब्रदर ...मजहब और ईमान इनका क्या? जब चाहे बेच लो। वैसे भी तिलक चोटी वाले कबूतर मेरे चक्कर काट रहे हैं कि तुमसे बात करा दूँ। दुगुना दाना पानी देंगे, इज्जत देंगे और फिर तुम्हारे सब भाई बंद जात-बिरादरी वाले सब वहीं तो हैं ...वहाँ तुम्हारा मन लग जाएगा, कहो तो बात करूँ?'

कबूतर मिनमिनाया बोला, 'पहले तो उन लोगों ने भूखा मर जाने दिया। छोटी जात का कबूतर कहकर दुत्कारे रखा, छुआ छूत दिखाई। अब वो मुझे क्यों लेंगे भला?'

एक दिन कबूतरी बोली, 'सुनो जी, अब बच्चे बड़े हो रहे हैं। उनकी शादी वादी भी करनी है कि नहीं? दोनों कबूतर बच्चों के लिए दुल्हन ढूढ़नी है, तीनों बच्चियों के लिए भी दूल्हे खोजने हैं। अपनी जाति बिरादरी में तो अच्छे रिश्ते मिलने वैसे भी मुश्किल हैं।'

कौआ फिर हँसा। हँसने से फुर्सत पाकर बोला, 'अजीब अहमक हो ब्रदर कबूतर ...तुम जब तक उनके साथ था उन्हें तुम्हारा कीमत पता नहीं था। तुमने मजहब का बोली लगवाया। क्रिस्तान, मुसलमान लोग तुमको खरीद लिया। अब उनको लगेगा ना, कि उनका कबूतरों का नंबर कम हो गया। उस नुक्सान की भरपाई तो करना होयेगा ना? बस वो तुमको गाजा बाजा के साथ फिर अपना लेगा। दाम भी अच्छा मिलेगा। बोल, क्या कहता है बात करूँ?'

कबूतर के मन में फिर से बिछुड़े भाई बहनों से मिलने आशा हिलोरें लेने लगी, फिर, ज्यादा अनाज और पानी का लालच तो था ही। उसने हाँ कर दी।

अगले दिन दर्जनों तिलक चोटियों, तलवारों, तराजू वाले कबूतर आ धमके। मन्त्रों का उच्चारण हुआ। नहावन धोवन हुआ। गंगा जल छिड़का गया। जल इतना ठंडा था कि कबूतर को जुकाम हो गया।

वह मिनमिनाते हुए बोला, 'ये क्या कर रहे हैं, ऐसे तो में बीमार हो जाऊँगा। इस सबकी क्या जरुरत है?'

तिलकधारी कबूतर बोला, 'पगले तू अशुद्ध हो गया है, म्लेच्छों और क्रिस्तानों ने तुझे अशुद्ध कर दिया था। हम तुझको शुद्ध कर रहे हैं, शुद्धि के बाद ही तो तू महान हिन्दू धर्म में वापस आ पायेगा। ये तेरी घर वापिसी है। प्रभु की कृपा मान कि तू लौट आया, वरना तो तुझे नरक में भी जगह नहीं मिलती। कुम्भीपाक, रौरव पता नहीं कैसे कैसे नरक देखने पड़ते। बच गया लल्ला तू।'

ये बातें सुनकर कबूतर सिहर गया। उसने चुपचाप सारे कर्मकांड करा लिए। उसके बाद लम्बे तिलक वाले ने ढोल नगाड़ों की आवाज के साथ घोषणा कर दी, 'अब कबूतर शुद्ध हो गया है, अब ये फिर से हिन्दू कबूतर कहलायेगा।'

कबूतर खुश था, पर फिर भी मन में शंका थी। उसने लम्बी दाढ़ी वाले, भगवा कुरते वाले कबूतर से बात की, बोला, 'माई बाप, बाकी सब तो ठीक है, पर पहले इस धर्म में जाति-पांति का बड़ा चक्कर था। अब तो ऐसा नहीं होगा ना...?

लम्बी दाढ़ी हँसी, बोली, 'तू पगला गया है क्या, हमारे महान धर्म में इसके लिए जगह ना थी, ना होगी। तू चिंता मत कर। पहले कभी कुछ ऐसा हुआ भी हो तो अब कतई नहीं होगा। मैं अपनी दाढ़ी और तिलक की कसम खाता हूँ, ऐसा नहीं होने दूँगा।' कहकर वह अपने साथियों समेत चला गया।

हिन्दू बन चुके कबूतर ने उनके जाते ही फिर अनाज में मुँह मारा, छककर जल पिया। अब वह सच्ची में खुश था। उसे लगा अब सच्ची में उसके अच्छे दिन आ गए।

वह बहुत दिन खुश रहा।

एक दिन कबूतरी बोली, 'सुनो जी, अब बच्चे बड़े हो रहे हैं। उनकी शादी वादी भी करनी है कि नहीं? दोनों कबूतर बच्चों के लिए दुल्हन ढूढ़नी है, तीनों बच्चियों के लिए भी दूल्हे खोजने हैं। अपनी जाति बिरादरी में तो अच्छे रिश्ते मिलने वैसे भी मुश्किल हैं।'

कबूतर हँसा, बोला, 'पगली, क्यों चिंता करती है। अब जात बिरादरी की क्या बात अब पहले वाली बात ना है। खुद आचारज जी ने ये बात कही है। मैं उनसे बात करूँगा, ऊँची जातियों में ब्याहुंगा अपने बच्चे। खुद आचारज का छोरा बड़ा मलूक है, ब्याह के लायक भी। उनसे बात करूँगा, तू चिंता मत कर।'

....शेष पृष्ठ 41 पर

हरीश नवल के दो हाफ लाइनर

1. भारत एक किलाप्रधान देश है

भारत एक किलाप्रधान देश है। भारत में जितने भी विदेशी पर्यटक आते हैं एवं जिन पर्यटन प्रसिद्ध स्थलों में भ्रमण करते हैं, वहाँ किले ज़रूर होते हैं। किले बहुत आकर्षित करते हैं... बरसों बरस से खड़े हैं, मुस्तैदी से। उनकी विशालता, दृढ़ता और इतिहास के सच्चे झूठे किस्से उनकी गोद में बैठे गाइड सुनाते रहते हैं।

कभी आपने सोचा कि आज़ादी के बाद के हमारे नेताओं और किलों में कई समानताएँ होती हैं... बहुधा उनकी विराटता किलों से भी कहीं अधिक विशाल होती है।

वे इतने दृढ़ होते हैं की जो भी वे देश के नाम पर अपने और परिवार के लिए करते हैं उसमें अडिग रहते हैं... उनकी अर्थव्यवस्था उत्तरोत्तर धनात्मक होती है भले ही देश की ऋणात्मक होती हो। उनकी यशोगाथा और इतिहास मक्खन में लिपटा कर उनके गुर्गे गाइड पेश करते हैं। किलों पर फहराती दृश्य ध्वजाओं से कहीं अधिक उनकी अदृश्य विजय पताकाएँ फहराती दिखती हैं...

...आपने कई किले देखे होंगे। भारत की शान दिल्ली है और दिल्ली की पहचान लाल किला है वह भी शायद देखा होगा।

दूर से देखने पर लाल किला बहुत आकर्षित करता है मानो आपको पुकारता है। उसको घेरे एक खाई है जो नज़र में नहीं आती है... ऐसी खाई हर किले के साथ होती है... हमारे कर्णधारों के साथ भी खाई होती है... जितनी गहरी और बड़ी खाई होती है उतना ही बड़ा नेता होता है...

...आपने कई किले देखे होंगे। भारत की शान दिल्ली है और दिल्ली की पहचान लाल किला है वह भी शायद देखा होगा।

दूर से देखने पर लाल किला बहुत आकर्षित करता है मानो आपको पुकारता है। उसको घेरे एक खाई है जो नज़र में नहीं आती है... ऐसी खाई हर किले के साथ होती है... हमारे कर्णधारों के साथ भी खाई होती है... जितनी गहरी और बड़ी खाई होती है उतना ही बड़ा नेता होता है...

दूर से वह ज़मीन से, अवाम से जुड़ा नज़र आता है किन्तु जैसे ही आप उसके करीब जाते हैं, आप पाते हैं कि वह अभी भी दूर है और आप कब खाई में गिर जाते हैं, पता भी नहीं चलता ण्ण्ण्इसलिए उसके पास जाने से पूर्व उसकी 'खाई' का ब्यौरा अवश्य ले लें।

आमीन!

2. चलती ट्रेन से बरसती शुचिता...

दिल्ली से अमृतसर की ओर जा रहा हूँ। स्वर्ण जयंती शताब्दी के ई1 कोच में तीन नम्बर सीट पर पीठ टिकाए आनन्द से बैठा अखबार पढ़ रहा था, बीच बीच में बाहर के दृश्य बुला लेते थे ...हल्की बूँदा बाँदी के कारण आसमान कुछ नीला और कुछ श्यामल था... गाड़ी चले बीस मिनट ही बीते होंगे जिस बीच पानी की बोतल, छाछ की डिबिया और अखबार उपलब्ध हुए थे... बाहर के दृश्य में आसमान वैसा ही मोहक था पर ज़मीनी हकीकत बिलकुल बदल गई थी... पटरी के साथ साथ दूर तक शुचिता का साम्राज्य मुँह बाये चिढ़ा रहा था ... प्लास्टिक, शीशे, कागज़, गत्ते आदि आदि सौंदर्यबोध की अजब ग़ज़ब परिभाषाएँ गढ़ रहे थे... यहीं तक ग़नीमत न थी... बहुत से पीठ दिखाते प्राणी श्रीलाल शुक्ल का रागदरबारी जपते हुए 'तीतर लड़ाने की मुद्रा' में बैठे हुए थे... कुछ शूरवीर वीरता से रेलयात्रियों की निगाहों का सामना कर रहे थे ...मेरा अख़बार कभी का लज्जा या भय के मारे धराशयी हो चुका था जिसमें मैं 'राजकीय स्वच्छता अभियान' के घनघोर साफल्य की आधिकारिक विज्ञप्ति लगभग आत्मसात कर चुका था...

बूँदाबादी अभी भी हो रही है ...आसमान के रंग पूर्ववत्त हैं किंतु मन का मयूर मर चुका है ...बारिश की बूँदों में यकायक विष्टा बरसने लगी है ...चारों ओर कौन सा अभियान चल रहा है ...सोचने लगा हूँ ...खिड़की का हरा परदा गिरा कर भी जाने क्यों मैं शस्य श्यामला भारत का 'शिक्षित नागरिक' बेपर्दा हो रहा हूँ।

संपर्क– 65, साक्षर अपार्टमेंट्स, ए-3, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-110063

चार लघुकथाएँ

बलराम अग्रवाल

कहानी कुत्ते की

सुबह के 9 बजे थे, जब मोबाइल वाइब्रेट हुआ। पत्रिका के अगले अंक का काम निबटाकर प्रभाकर 3 बजे सोया था। अलसाये हाथ से मोबाइल उठाया, 'हलो?'

'प्रभाकर आर्य?' उधर से किसी अनजान पुरुष ने पूछा।

'जी, फरमाइए।'

'पत्रिका क्या तेरे बाप की है?'

उसे लगा, बोलने वाला आसपास ही कहीं खड़ा है। उठकर खिड़की से झाँका। गत चौथाई सदी से संस्था के सचिव पद पर काबिज बेलजियन शेफर्ड चंद चिरकुटों के साथ नीचे खड़ा था। बिना यह जताए कि उसने उसे देख और पहचान लिया है, शांत स्वर में अनुरोध किया, 'आप नाम बताएँगे अपना?'

'नाम जानकर क्या करोगे?' वह थूक छोड़ता-सा बोला और हाथ में पकड़ रखी पत्रिका को हवा में लहराते हुए पुनः पहले की तरह भौंका।

'अपना नाम तो बताइए महाशय!' प्रभाकर ने सवाल दोहराया।

'इस पत्रिका पर पैसा हम खर्च करते हैं...' मूल सवाल को टालकर वह चीखा, 'और तूने इसके तीस पेज बरबाद कर डाले!'

'उनमें से एक भी पढ़ा आपने?' प्रभाकर ने अब उसकी ब्रीड जता देना बेहतर समझा, 'उन 30 पेजों में टाल्स्टॉय हैं, उनकी पत्नी हैं, कहानियाँ हैं, उपन्यास अंश है, यात्रावृत्त है, बातचीत है....'

'कुछ भी नहीं है, अगर हम और हमारे आदमी उसमें नहीं हैं!' वह बेशर्मी से बोला, 'तू कभी बुड्ढों की फोटो इसके कवर पर छापता है, कभी औरतों की, कभी...! साहित्य और कला की पत्रिका है, कुछ शर्म है कि नहीं?'

'जिन्हें 'बुड्ढे' कह रहे हो, वे हिन्दी साहित्य के पुरोधा थे– डॉ. रामविलास शर्मा और केदारनाथ अग्रवालय और जिसे 'औरत' कह रहे हो, वह इस देश के अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति-प्राप्त चित्रकार राजा रवि वर्मा की विश्वविख्यात पेंटिंग थी।'

साहित्य और कला के बारे में अपनी दरिद्रता का खुलासे पर भी वह तिलभर नहीं हिला।

'चिरकुटों की बदौलत गद्दी हथिया, रखने और जोर-जोर से भौंक लेने से ही विद्वान नहीं हो जाता कोई!' प्रभाकर ने आगे जोड़ा।

'हिम्मत और समर्पण चाहिए!' वह तिलमिलाकर भड़भड़ाया, 'सेवानिवृत्ति के बाद भी घर-परिवार की सुख-सुविधा त्याग हजारों मील दूर पड़ा हूँ। तू पड़कर दिखा।'

'सेवा के लिए नहीं, चूना लगाने के लिए। गद्दी से हटकर यह सेवा करके दिखा। जिंदे-मरे सारे पुरखे याद आ जाएँगे चार ही दिन में...।'

'धत् साला...!' यह सुनते ही उसने पैर पटके और अगल-बगल खड़े चिरकुटों से बोला, 'संपादक-पद से इसी समय से इस कुत्ते की छुट्टी!'

गर्दिश में गौरैया

'सुनो...'

'क्या?'

'एक बात दिमाग में आई है।... इन अंडों से जो चूजे निकलेंगे, उन्हें उड़ना सिखाते-सिखाते इस जगह से हम दूर निकल जाएँगे।'

'क्यों?'

'देख ही रही हो कि जंगल बेचारा सुबह से ही थर-थर काँपना शुरू कर देता है! कटान खा-खाकर सिकुड़ता जा रहा है!!'

'सो तो है, लेकिन जाएँगे कहाँ? रहेंगे कहाँ?'

'जैसे उस पेड़ से इस पेड़ पर आये थे, वैसे ही उड़ते-रुकते बढ़ते रहेंगे आगे।'

यह सुनकर चिड़िया ने पनीली आँखों से चिड़े को देखा।

''हम परिंदे हैं पगली, इन्सान थोड़े न हैं जो डेरा डालकर पड़ जाएँ। वे पंख ही क्या जिनमें उड़ान न हो।'

लेकिन चिड़िया आँख के पानी को रोक नहीं पायी। बोली, 'नीचा उड़ने वाला हर परिंदा ऊपर उड़ने वाले के पंजों तले होता है। कौआ, चील, बाज और गिद्ध जैसे ऊँची उड़ान वालों के ऊपर एक और पंजा पिछले काफी दिनों से उड़ने लगा है...!'

'वही तो इधर भी बढ़ रहा है। यह मत समझो जानू, कि

कौए, चील, बाज़ और गिद्ध नहीं रहे तो हम सुरक्षित हो गये! देखो, अपने जाति भाइयों का शिकार बनने के बावजूद हम बचते और बढ़ते रहे, लेकिन उनके न रहने पर... इस पंजे से बचे रहना नामुमकिन नजर आने लगा है।'

'बताओ तब...?'

'समन्दर के बीच एक टापू पर घना जंगल है। सुना है, इन्सान ने चिड़ियों के लिए महफूज़ रखा है उसे! नाम ही 'चिड़िया टापू' है उसका। वहीं जाएँगे।' चिड़े ने कहा, 'उधर जाने की बात अपने इन चूजों को बताएँगे, ये अपने चूजों को और वे अपने...। आने वाली पीढ़ी का हर चूजा उधर ही सिर करके उड़ना सीखेगा।'

'काल का गाल है ये आसमान...!' चिड़िया ने डूबी हुई आवाज में कहा।

'अकेले हमारे लिए तो नहीं है न! डर मत, भरोसा रख—हमारे वंश का एक न एक जोड़ा पहुँचेगा जरूर उस जंगल में!' चिड़े ने चोंच से उसके सिर को सहलाते हुए कहा।

डरी हुई चिड़िया कुछ न कह सकी। ममत्वभरे पंजों से उसने अंडों को एकजुट किया और पंखों के नीचे ले लिया।

एक राजनीतिक संवाद

– सर, 'पेड़ पर उलटा लटकने' वाले में और 'हर शाख पे बैठा' होने वाले में क्या अन्तर है?

– एक ही डाली के चट्टे-बट्टे हैं दोनों, कोई अन्तर नहीं है।

– यह कैसे हो सकता है?

– देखिए, जब आप सत्ता में होते हैं तो सारा विपक्ष आपको उलटा लटका दिखाई देता है... और जब आप विपक्ष में होते हैं तब सत्तापक्ष का हर शख्स आपको 'शाख पे बैठा' दिखाई देता है।

– सर, खुद अपने बारे में कैसे पता लगाएँ कि हम क्या हैं?

– अगर आप राजनीतिक जीव नहीं हैं तो बहुत आसान है। अपनी आवाज को ध्यान से सुनो। विवेक से परखो। वह अगर सत्तापक्ष की चिरौरी करती-सी लगे तो समझ लीजिए कि एक 'शाख' पर आप भी बैठे हैं, और अगर अंधों की तरह उसका विरोध करती-सी लगे तो समझ लीजिए कि आप पेड़ पर उलटा लटके हुओं में शामिल हैं।

– और राजनीतिक जीव हों, तब?

– तब... विवेक की बात भूल जाइए।

– क्यों?

– अन्तरात्मा मर जाती है।

बत्ती गुल

दृश्य : 1

हिन्दी साहित्य, कला और संस्कृति के संरक्षण की पत्रिका का कार्यालय। सम्पादक और उप-संपादक। आमने-सामने। बीच में—प्रकाशन के लिए प्रेस को भेजी जाने वाली पत्रिका की फाईनल फाइल।

'अध्यक्ष जी की बाकी रचनाओं का क्या किया?'

'डस्टबिन दिखा दी।'

'डस्टबिन? ओए... दिमाग खराब है तेरा?'

'खराब है, तभी तो यह एक लगी रहने दी। वरना इसमें भी, है क्या पढ़ने लायक?'

'समझता क्यों नहीं है? ट्रस्ट के सारे मेम्बर्स पर होल्ड है उसका!'

'हुआ करे।' उप-सम्पादक चिढ़कर बोला, 'पॉकेट साइज का हिन्दी संस्करण... साला...। देवसरे, दिनकर, प्रेमचंद... सब जैसे उसकी जेब में आ बैठे हैं अध्यक्ष बनते ही! ...और, आ बैठे हैं तो आ बैठा करें, मगर...। सुनिए शुक्ला जी, एक अंक में एक व्यक्ति की एक ही रचना जानी चाहिए, है कि नहीं? और उसूल तो यह है कि स्तम्भकार के अलावा किसी भी व्यक्ति को अगले अंक में दोहराया नहीं जाना चाहिए।'

'तेरी सारी बातें सही हैं मेरे बाप, लेकिन...' सम्पादक ने हाथ जोड़े।

'लेकिन-वेकिन कुछ नहीं, शुक्ला जी...!' नौजवान खून में थक्के नहीं पड़ते, वह ब्लॉक नहीं होता, लेकिन यह खून अड़ गया, 'नौकरी दूसरी मिल जाएगी, लेकिन जमीर एक बार वेंटीलेटर पर गया, तो समझो हमेशा के लिए गया। अगला अंक पूरा का पूरा इस कुत्ते-कमीने पर केन्द्रित कर लेना, मैं चूँ नहीं करूँगा, क्योंकि ऐसी योजना का हिस्सा मैं रहूँगा ही नहीं। लेकिन, इस अंक की तो डमी यही रहेगी।'

'अरे यार!... जो करना था, तूने अपनी तरफ से कर दिया न? अब जा... जाकर अपनी सीट पर बैठ। मैं इसे भेजता हूँ प्रेस में।' कुर्सी के हत्थे पर रखे तौलिए से संपादक ने अपना माथा पोंछते हुए बड़े प्यार से उसे टरकाया।

दृश्य : 2

वही कार्यालय। वही सम्पादक और उप-सम्पादक। आमने-सामने। बीच में—पत्रिका की मुद्रित प्रति। साथ में इस्तीफा।

– अन्धकार –

संपर्क– एम-70, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032
मो. 8826499115 ई-मेल : 2611ableram@gmail.com

गरीब की पूजा

सुरेश सौरभ

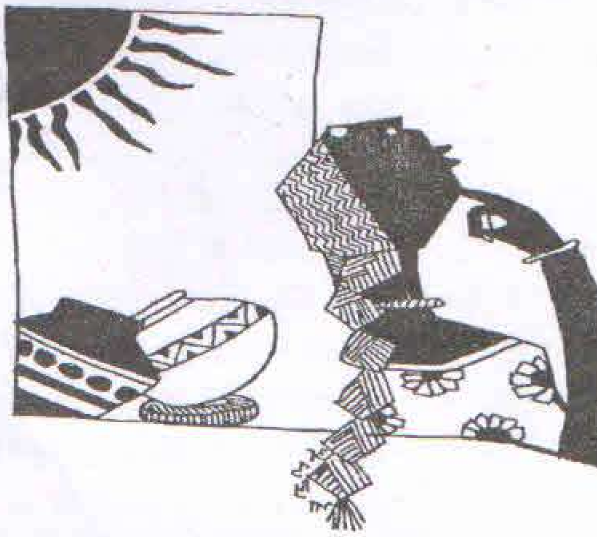

अनाथालय के सारे बच्चे टकटकी लगा, मुख्य गेट की ओर सुबह से देख रहे थे। सारा दिन हो गया, शाम का धुंधलका छाने लगा। अभी तक कोई दरियादिल प्रकट न हुआ, जो इस होली में उन्हें कुछ उपहार में मिठाई आदि दे।

अचानक कायाकल्प हुआ। गेट को किसी ने खटखटाया। फौरन दौड़कर बच्चों ने गेट खोला। वही बूढ़ा, जो रोज अखबार डालने आता था। एक बड़ा थैला लिए, अपने चेहरे पर तमाम खुशियाँ लिए, बच्चों के सामने था। सारे बच्चे उसे घेरकर खड़े हो गये। जैसे जादूगर बच्चों को जादू दिखाना चाह रहा हो। फिर जादू शुरू हुआ। बूढ़े के झोले से निकलकर उपहार और मिठाईयां बच्चों के मासूम हाथों में पहुँचने लगे। सारे बच्चे खुशी से झूम गये। वांसती बयार पर फागुनी फुहार छा गयी। फिर सब बच्चों के लाल गुलाबी चेहरे भी हो गये। गरीब की सौगात देखकर अनाथालय के वार्डन ने उस बूढ़े से कहा, ''बाबा, आपने इतना इंतजाम कहाँ से किया।''

गरीब की आत्मा बोली, ''यह परमात्मा करता है, मैं नहीं। इन्हें देने में जो सुख है, वह और कहाँ। मेरी तो यही पूजा है और मेरी यह पूजा ईश्वर ही पूरी करता है।''

वार्डन अब खामोश और गंभीर हो गया, उसे सामने दीवार पर लिखा कथन, नर सेवा नारायण सेवा, मथानी सा मथने लगा।

संपर्क– निर्मल नगर, लखीमपुर-खीरी-262701 उत्तर प्रदेश

प्रसन्नता

विभा रश्मि

सुबह चिड़ियों की चहचहाहट से आठ वर्षीय टुटूल की नींद खुल गई। स्कूल की छुट्टी होने की बात याद आते ही वो मस्ती के मीठे अहसास से भर गया।

धीरे से अलसाई आँखें खोल कर फूलोंवाले पर्दे को देखा जो मम्मी-पापा और उसके कमरे के बीच पंखे की हवा से हिल-हिल कर इठला रहा था। निगाह उन गिफ्ट्स पर टिक गयीं, जो कल जन्मदिन में मिले थे।

'धत्! नहीं लेता टॉयज़।'

'नहीं चाहिए खिलौने, शेरू की निन्नी जैसी लाल फ्रॉक वाली बहन, अगर डॉक्टर आंटी गिफ़्ट में ला दे तो...।' उसने आँखें मिचमिचाकर खोल दीं।

नेत्र घुमा, तो कमरे की खिड़की से नीले आसमान में पंक्तिबद्ध पंछी उड़ते दिखे। आज़ादी के अहसास से भरकर टुटूल मुस्कुरा दिया। उसका दिल बाहर जाने के लिए मचल उठा। उसने चाहा कि अगर उसके भी पंख निकल आते तो कितना मजा आता ...।

कुर्सी धीरे से खिड़की के निकट खींचकर टुटूल उस पर चढ़ गया। बाहर झाँकते ही उसके नेत्र खुशी से चमक उठे। बगीचे में उसकी दोस्त गिलहरियाँ कच्चे अमरूद कुतर कर पेड़ पर तेजी से उतर-चढ़ रही थीं और गौरैयाँ शाखों पर बैठी चहचहा रहीं थीं।

उसने विंडो-ग्रिल को कस कर पकड़ए अपना सिर उस पर टिका दिया। हवा के मदिर झोंकों ने उसका चेहरा सहला दिया। तभी उसने अपने नज़दीक मम्मी को खड़ पाया। मम्मी को अचानक पा वो किलकारी मारकर उससे लिपट गया।

भोर की शीतल बयार में माँ-बेटा हमउम्र बन, हँसते-खिलखिलाते खेल रहे थे। टुटूल को अपने जन्मदिन का सबसे प्यारा तोहफ़ा मिल चुका था, मम्मी जैसा दोस्त।

संपर्क– एस-1/303, लाइफस्टाइल होम्स, होम्स एवेन्यू, वाटिका इण्डिया नेक्स्ट, सेक्टर 83, गुरुग्राम-122004 हरियाणा

रुक सत्तो!

शोभना श्याम

एक बेहद सर्द दिन! दोपहर के बावजूद बाहर घटाटोप अंधकार है, जो खिड़की के रास्ते शारदा के मन-मस्तिष्क में उतरता जा रहा है। हलकी बूँदा-बाँदी बाहर भी हो रही है और अंदर भी। आसमान में रह-रह कर बिजली चमक रही है और दिल में टीस। प्रवासी बच्चों के विछोह ने स्वर्गवासी पति की यादों पर भी धार रख दी है, सो वो उसके वजूद को लहूलुहान कर रही हैं। व्हाट्सएप्प के उस मैसेज को आँखों ने स्कैन करके अंदर रख लिया था और दोपहर से बार-बार रिवाइंड करके देख रही थीं कि शायद आँखों में घिरी बदली के कारण ठीक से न पढ़ा गया हो।

पंद्रह दिन पहले ही तो बड़े का फोन आया था कि बच्चों की सर्दी की छुट्टियाँ हैं, सो हम आ रहे हैं आपके पास। यहाँ तो इन दिनों भारी बर्फबारी के कारण कहीं भी निकलना असम्भव हो जाता है। बच्चे घर में बंद, बोर हो जाते हैं।

सुनकर खुशी से शारदा के हाथ-पैरों में पंख लग गए थे। पहले बेटे-बहु और दोनों पोतों की पसंद के खाने और नाश्तों की लिस्ट बनाई फिर स्वयं बाजार जा-जाकर सारा जरूरी सामान लाई। दुकानदार ने टोका भी–'माता जी, आप फोन कर देतीं नए मैं घर भिजवा देता सारा सामान। इतनी सर्दी में क्यों जोखिम उठा रही हैं।'

'अरे बेटा! यहाँ सामान देखकर बहुत-सी भूली हुई चीजें भी याद आ जाती हैं। और फिर, इतनी भी बुढ़ा नहीं गयी हूँ मैं। इतने दिन बाद घर में ढंग का खाना-पीना होगा। कोई कसर नहीं रहनी चाहिए।'

सामान से शारदा की सारी रसोई भर गयी है और आज व्हाट्सएप्प पर .... 'सीमा को छुट्टी नहीं मिली, ऑफिस में अर्जेंट काम है। सॉरी माँ ! अभी नहीं आ पाएँगे।'

ऐसा लगा जैसे किसी ने सक्शन पम्प से बदन की सारी जान खींच ली हो। जितनी बार वो मनहूस मैसेज आँखों के सामने फ़्लैश-सा चमकता, अवसाद के बादल और घने हो जाते। मन में आया, कि इतने दिनों से इकट्ठा किया सारा सामान उठाकर फेंक दे।

आकाश में छाई घटाओं में अपनों के चेहरे ढूँढती शारदा को पता ही नहीं चला... कब दोपहर ढल गयी और कब उसकी घरेलू सहायिका सारा काम निपटाकर उसके पीछे आ खड़ी हुई। शारदा के कंधे पर धीरे-से हाथ रख बोली–'मम्मी जी, जा रही हूँ दरवाजा लगा लो।'

'हाँ... आती हूँ... अरे... रुक सत्तो! बारिश तेज हो गयी है, भीग जाएगी। चल... चाय के साथ गर्मागर्म पकौड़े बनाते हैं। दोनों बैठकर खाएँगे।'

संपर्क– मकान नं. 4, मार्केट रोड, डी एल एफ फेज-1, गुरुग्राम-122002 हरियाणा

कंधा

प्रभात दुबे

शहर से बाहर रह रहे मेरे अभिन्न मित्र देवदत्त शर्मा जी के चारों बेटे समय पर आ गये थे।

उनके आते ही शवयात्रा प्रारंभ हुई। परंपरा अनुसार चारों बेटों ने कंधा दिया। कुछ दूरी चलने के बाद, उनके एक बेटे से जैसे-ही मेरी नजरें मिलीं; उन्होंने ईशारा किया। मैने तत्काल उनसे कंधा बदला। कुछ ही कदम चला था कि जैसे शर्मा जी की चिर-परिचत आवाज मेरे कानों में सुनाई दी। वे मुझसे कह रहे थे–''पाठक जी, अपने चारों बेटों के चार कंधों को एक साथ देखकर मैं सोचता हूँ कि इन चारों में से किसी एक ही का कंधा मिल जाता तो काफी था! गर यह मुझे जीते-जी मिल जाता तो मैं शायद... कुछ दिन अभी जीवित होता।'

सम्पर्क–प्रभात दुबे, 111 पुष्पांजली स्कूल के सामने, शक्तिनगर, जबलपुर-470661 म.प्र.

पाँच लघुकथाएँ

विजय

82 वर्षीय उपन्यासकार व कहानीकार विजय जी इन दिनों अस्वस्थ हैं। उन्होंने हिन्दी लघुकथाओं की सम्प्रेषण क्षमता से प्रेरित और प्रभावित होकर सन् 2004-05 में लघुकथा लिखना प्रारम्भ किया। उनकी लघुकथाएँ वागर्थ, नया ज्ञानोदय, कथाबिंब, हरिगंधा (लघुकथा-विशेषांक), संरचना (लघुकथा वार्षिकी) आदि अनेक प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं। उनके स्वस्थ रहने हेतु शुभकामनाएँ।

औरत

प्रदीप बाबू को अब महसूस हो रहा था कि उन्होंने डॉक्टर की सलाह न मानकर कितनी बड़ी गलती की।

अफसोस जताने के लिए आई प्रदीप की बुआ से उसकी उदास आँखें न देखी गईं। बोली, 'हाय, अभी उम्र ही क्या है मेरे बच्चे की। एक औरत तो चाहिए ही घर सँभालने को। मेरी पहचान में एक विधवा है। गरीबी के कारण बीस साल की जवान बेटी कुँवारी बैठी है बेचारी की। मैं तेरी बात करती हूँ।'

बुआ ने बात चलाई और बयालीस साल के प्रदीप बाबू का विवाह बीस साल की छमा से हो गया।

दस साल की अनुराधा, छह साल की निष्ठा और मात्र बीस दिन का उनका भाई एक कमरे में सोते, और पत्नी के साथ प्रदीप बाबू दूसरे कमरे में। बच्चा कभी-कभी बहनों के सम्भाले भी नहीं सम्भलता था। छमा तब पति के पाश से निकलकर उधर जाने का यत्न करने लगती। प्रदीप उसे समझाता-'जब उन दो के सम्भाले नहीं सम्भल रहा है तो तुमसे क्या सम्भलेगा! रोने दो थोड़ी देर, थक-हारकर सो जायगा।' यों कहते हुए अपने पाश को वह और कड़ा कर देता।

'दूसरी औरत को यह आदमी किसके लिए घर में लाया है...' दमघुटी छाया बमुश्किल साँस लेती हुई सोचती-'अपने लिए, घर के लिए या बच्चों की देखभाल के लिए!'

विजय जी का संक्षिप्त परिचय-कथाकार विजय। मूल नाम-विजय बहादुर श्रीवास्तव। सेवानिवृत वैज्ञानिक(रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन) हैं। इनका जन्म 06 सितम्बर, 1936 को आगरा (उत्तर प्रदेश) में हुआ। एक किशोर उपन्यास समेत इनके अब तक 7 उपन्यास, 15 कहानी-संग्रह, 2 बाल-पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। इनकी अनेक कहानियों का अँग्रेजी, उर्दू, उड़िया, तेलुगु आदि भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। कथाकार जोगिंदरपाल के उपन्यास 'पार परे' समेत उनकी अनेक कहानियों और लघुकथाओं का उर्दू से हिन्दी में अनुवाद कर चुके हैं। अनेक पुस्तकों की समीक्षाएँ प्रकाशित।

बेटियाँ

जच्चगी के पाँचवें दिन ही संध्या को अस्पताल से घर ले चलने के लिए कह दिया था बुआ ने। भतीजे राजेश बाबू को साथ ले वह डॉक्टर के केबिन में जा बैठी थी। डॉक्टर ने राजेश से कहा था, 'नई जिन्दगी मिली है आपकी पत्नी को। बुखार अभी भी है। यह बिगड़ भी सकता है अगर ढंग से देखभाल न हुई तो। अच्छा रहेगा यदि पाँच-सात दिन यहीं रहने दें।'

मगर बुआ ने एक न सुनी। बोलीं, 'कल छठी है और दस्टौन वाले दिन दावत भी है। घर का डॉक्टर कांत देखभाल कर लेगा...'

'देख लीजिए। जान है तो जहान है।' यों कहते हुए डॉक्टर ने डिस्चार्ज स्लिप बना दी थी।

दावत की बात सुन, साथ आई राजेश की बेटियाँ खुश हो गई थीं। पापा से पूछ बैठी थीं-'हमारे पैदा होने पर भी दी थी दस्टौन के दिन दावत?'

राजेश बाबू मुँह खोलते, उससे पहले ही झुँझला उठी थीं पास बैठी बुआ-'चुप रहो। लड़कियों के जनम पर कौन देता है दावत, जो तुम्हारे जनम पर दी जाती।'

लड़कियाँ खामोश रह गईं और खिलौने-जैसे नए भाई को देखने लगीं।

अंत

रात हो चली थी। शहर से करीब होने की वजह से सड़क किनारे के पोल्स पर बत्तियाँ जलने लगी थीं। सड़क के किनारे खड़े वृक्षों के पीछे घना जंगल था। रात-बिरात उस जंगल में

लोग घुसने की हिम्मत नहीं करते थे। सड़क से जब कोई कार फर्राटे लेती तेजी से गुजरती तो सड़क किनारे के वृक्षों के पत्ते हिल उठते। एक उँचे पेड़ के नीचे उग आया पौधा सुगबुगाकर पूछ बैठा, 'क्या हुआ दादा?'

'कुछ नहीं। कारों से चलते लोग हमारी नींद खराब कर देते हैं। सोचते नहीं कि हम वक्त से सोते और जागते हैं।'

तभी एक स्कूटर आकर उस वृक्ष के नीचे रुका। छोटा पौधा उसके टायर की चपेट में आ गया। गहरी चीख उसके कंठ से निकल उठी।

'क्या हुआ बच्चे?' वृक्ष ने पूछा, लेकिन मर चुका पौधा क्या जवाब देता।

श्रद्धा-पत्र

आदमी ने स्कूटर को रोका। उसे स्टैंड पर खड़ा किया और जेब से मोबाइल निकालकर कोई नम्बर मिलाने लगा।

पेड़ ने झुककर देखा–अरे, ये तो पीछे वाले जंगल के रेंजर साहब है!

नम्बर मिलाकर मोबाइल को रेंजर साहब ने दायें कान से सटा लिया था। उधर घंटी जा चुकी थी लेकिन फोन उठाया नहीं जा रहा था। वे आवाज का इंतजार करने लगे। इंतजार करने के दौरान ही कदम बढ़ाते हुए वे पेड़ से कुछ आगे जंगल में भीतर की ओर निकल गए और अगले पेड़ के नीचे जा खड़े हुए। इसलिए जैसे ही उधर से किसी ने फोन उठाया और रेंजर साहब ने इधर से बात करनी शुरू की–पेड़ कुछ भी सुन नहीं पाया।

कितनी तरक्की कर ली आदमी ने!– वह सोचने लगा– हवाई जहाज, रेल, कार ट्रक, फोन और न जाने क्या-क्या बना डाला है। एक हम हैं कि जरा भी अपने-आपको बदल न सके। जहाँ पैदा हुए थे, वहीं खड़े हैं।

तभी रेंजर के पीछे आ खड़े हुए एक इंसान ने गोली चला दी। रेंजर का मोबाइल और वह खुद–जमीन पर गिर पड़े। पेड़ चीख उठा–कत्ल...!

चीख इतनी भिंची-भिंची थी कि पास खड़ा पेड़ ही उसे सुन सका। वह हँसा और बोला–देखते जाओ।

अगले ही क्षण एक ट्रक वहाँ आ रुका। आठ-दस लोग उसमें से कूद पड़े। उनके हाथों में लोहे के औजार थे। पेड़ सहम गया।

'यह रेंजर अपने अफसर को बता रहा था कि उसे किसी से खुफिया जानकारी मिली है कि कुख्यात लकड़ी-तस्कर सड़क के पीछे का जंगल साफ कर देने के इरादे से चुपचाप यहाँ आ रहा है। वह उसे रोकने और गिरफ्तार कर लेने के लिए यहाँ आ डटा है।'

उसकी बात सुनकर पेड़ सकते में आ गया।

'तो क्या अफसर लकड़ी-तस्कर से...?'

'समझदार हो।' दूसरे पेड़ ने कहा और श्रद्धा-स्वरूप अपनी कुछ हरी पत्तियाँ उसने रेंजर की मृत-देह पर छोड़ दीं।

खतरे का भास

'क्या ये हमें काट डालेंगे?' हाथों में औजार थामे जंगल में घुसने को उद्यत कुछ लोगों को देखकर एक पेड़ ने दूसरे से पूछा।

'नही,' दूसरे पेड़ ने कहा, 'हमें नहीं, क्योंकि हम सड़क-किनारे के पेड़ हैं। मानव-सभ्यता की शोभा हैं।'

'तब?'

'इनके हाथों में बैटरी की ताकत से चलने वाले आरे हैं।' दूसरा बोला, 'रातों-रात ये भीतरी जंगल को साफ कर देंगे।'

'हम तो मनुष्य को पर्यावरण देते हैं। जिन्दगी देते हैं। फिर ये हमें क्यों काटते हैं?'

'सड़क के किनारे रहकर भी यह सब नहीं समझता?' दूसरा बोला, 'अरे, बाजार ने राजनीति को दलाल बना दिया है। सत्ता या राजनीति अपनी जेबें भरते हैं हमें कटवाकर और राजनीतिज्ञ चिल्लाते रहते हैं–पेड़ बचाओ।'

'मतलब कि सत्ता या राजनीति पेड़ कटवाने के लिए पेड़ लगवाती है! फिर तो एक दिन हमारा भी अंत होकर रहेगा।'

'हमारा ही नहीं, मनुष्य का भी अंत होना है एक दिन।'

तभी जंगल के अंदर कहीं से बैटरी वाले आरे चलने और पेड़ों के चटखने-चीखने, फड़फड़ाहट की आवाज के साथ धराशायी होने की आवाजें सुनाई देनी शुरू हुईं। दोनों के पत्ते हिले, खतरे का भास होने पर कान हिल उठते हैं जैसे। सड़क किनारे के वे पेड़ फिर सो नहीं पाये, सोचते रहे रातभर।

संपर्क– द्वारा श्री रुचिर श्रीवास्तव, गौड़ वलैरियो, डी पी एस पब्लिक स्कूल के सामने, अहिंसा खण्ड-2, इंदिरापुरम, गाजियाबाद-201012, मो. 09313301435

मनौती

सतीश राठी

नौकरी नहीं मिलने को लेकर वह बड़ा परेशान था। जिसने जो बताया उसने वह सब किया।

ऐसा ही किसी के बताने पर उसने रोज शाम को हनुमान मंदिर जाना शुरू किया। वह बड़ी श्रद्धा के साथ रोज मंदिर जाता, अगरबत्ती लगता, पुष्पमाला और प्रसाद चढ़ाता और हनुमान चालीसा का पाठ भी करता। नौकरी लग जाने पर उसने चोला चढ़ाने की मनौती भी की थी।

कुछ भाग्य की मेहरबानी और कुछ हनुमान जी की कृपा। उसकी नौकरी लग गई। अब वह प्रसन्न हो गया। नौकरी लगने के बाद कुछ दिन तो वह मंदिर गया फिर धीरे-धीरे बंद कर दिया। चोला चढ़ाने की कोई इच्छा उसके मन में नहीं बची थी। अब धीरे-धीरे वह मंदिर का रास्ता भी भूलने लगा था।

सम्पर्क–आर-451, महालक्ष्मी नगर, इंदौर-452010 (म.प्र.)

दो बूँदें

वीरेन्द्र कुमार भारद्वाज

नौकरानी किचेन में खाना बना रही थी। आज छुट्टी के दिन माँ अपने साल भर के बेटे को भरपूर प्यार देना चाहती थी। कभी गाय का दूध पिलाती, कभी रंग-बिरंगे खिलौने देती, पर बेटा कि चुप होने का नाम नहीं लेता। इधर एक मिनट के लिए बाथरूम गई माँ। लौटी, तो वहाँ बेटे को नहीं पाया। न ही उसकी कोई आवाज।

'राधा! राधा! किट्टू कहाँ है?' घबराती इधर-उधर दौड़ पड़ी माँ।

'झूला झूल रहे हैं दीदी।' नौकरानी ने बेफिक्री से कहा।

और, माँ ने देखा–किट्टू राधा की गर्दन में हाथ लपेटे उसकी पीठ पर लेटा है और राधा आटा गूँधती हुई अपनी पीठ झुला रही है।

टप-टप दो बूँदें ढुलक पड़ीं माँ की।

संपर्क– (डॉ. वीरेन्द्र कुमार भारद्वाज), शेखपुरा, खजूरी, नौबतपुर, पटना (बिहार) मो. 9334884520

अधूरा ख़त

स्नेह गोस्वामी

बन्ते का इंतजार करती सन्तो को नींद आने लगी थी। उसका दिल किया कि सो जाये। पर, अभी तो बन्ते को आना थाय फिर उन्होंने रोटी खानी थी। उसके बाद बर्तन-चौका... ये सब। आजकल तो बारह बजना आम बात हो गयी है। उसने घड़ी देखी–अभी तो सिर्फ साढ़े दस ही बजे हैं! बन्ते को आने में बहुत देर है। वक्त काटने के लिए उसने सोचा–'चलो, माँ को खत ही लिख लेती हूँ। बहुत दिनों से लिखने का सोच रही थी। आज ही सही।'

उसने खत लिखने के लिए कागज और पैन लिया, और लिखने बैठ गयी–

माँ तू फिकर न करना... मैं यहाँ बहुत खुश हूँ....

उसकी आँखों से टप-टप आँसू बह चले। धुँधलाई आँखों से अक्षर दिखाई नहीं दे रहे थे। उसने हौसला करके दुबारा लिखना शुरू किया ही था, कि दरवाजा खटका। पल्लू से आँसू पौंछते उसने दरवाजा खोला। बन्ते ने मोटी-सी गाली दी, 'इतनी देर से क्या कर रही थी?'

वह शराब के नशे से टुन्न हुआ लड़खड़ा रहा था। संतो सहारा देकर बड़ी मुश्किल से कमरे तक लेकर आई और खुद रसोई में चली गई रोटी लाने।

पहला कौर खाते ही बन्ते ने थाली फेंक दी–'ये दाल बनाई है तूने! जाए मैंने नहीं खानी तेरी रोटी!'

वह जवाब में कुछ बोल ही नहीं पाई। अंदर से छोटी ननद की आवाज सुनाई दी–'कुछ आता-जाता हो, तभी न बनाये!'

सास अलग बड़बड़ा रही थी–'मेरी तो किस्मत ही ख़राब है। सोचा था–ढंग की बहू आ जाएगी तो बेटा सुधर जाएगा!'

संतो परेशान है। उसे कौन बताए कि ये जनाब तो अभी-अभी फाइव स्टार में दावत उड़ाकर आ रहे हैं!

बंता जूतों समेत ही सो गया था। उसने धीरे-से उसके जूते उतारे। रसोई में जाकर रसोई समेटी। एक गिलास पानी पिया और पलंग पर ढेर हो गई।

पास की मेज पर पड़ी चिट्ठी अधूरी ही पड़ी थी...

संपर्क– 78 कमला नेहरू कालोनी, बठिंडा-151005

लावारिस

शराफत अली खान

(रंगमंच पर रात का दृश्य है। हल्का सा अन्धेरा छाया हुआ है। दिसम्बर माह का प्रथम सप्ताह है। तभी करीब से एक ट्रेन धड़धड़ाते हुए निकल जाती है। ऐसा प्रतीत होता है कि कोई रेलवे स्टेशन पास है। शायद लखनऊ का रेलवे जंक्शन है। अन्धेरा और गहरा जाता है, तभी नेपथ्य से एक निरीह, कमजोर आवाज वातावरण में गूंजती है।)

''लिहाफ... बहुत सर्दी है... मुझे लिहाफ दे दो, मेरे भाई।''

एकाएक रंगमंच पर प्रकाश बढ़ने लगता है। प्रकाश में एक विक्षिप्त भिखारीनुमा फटी खाकी पैन्ट और खाकी चीकट कमीज पहने बड़े-बड़े उलझे बाल वाला नाटे कद और सांवले रंग का दुबला पतला व्यक्ति हाथ में साईकिल के पहिए की एक तीली लिये उस व्यक्ति से कहता है जो कि लिहाफ बगल मे दबाए लिये जा रहा था। वह व्यक्ति लिहाफ को थोड़ा और कस के दबा लेता है और तेजी से यह कहता निकल जाता है, ''नहीं-नहीं ये लिहाफ मैं तुम्हें नहीं दे सकता। ये तो बहन गोपी के लिए ले जा रहा हूँ।''

इतना सुनकर वह विक्षिप्त भिखारी उसे पथराई आँखों से देखता रहता है।

(तभी रंगमंच पर अन्धेरा छा जाता है, और तथाकथित हमारे सभ्य और शिक्षित समाज के खोखले आदर्शों और मूल्यों के आवरण पर भी जिसने एक विलक्षण प्रतिभा को एक विक्षिप्त भिखारी बनने पर मजबूर कर दिया।)

ये कोई किसी नाटक का अंश नहीं है बल्कि हिन्दी एकांकी के जनक कहे जाने वाले प्रतिभाशाली हिन्दी लेखक भुवनेश्वर के जीवन के एक अंश का चित्रण मात्र है जो कि बनारस के घाट पर भिखारी की तरह मरे और लावारिस समझकर गंगा में प्रवाहित कर दिये गये।

सम्पर्क- 343, फ्राइक इन्कलेव, फेज-2 पो. रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली (उ.प्र.) 243006 मो.- 09012173297

मोह के धागे

छवि निगम

रॉय साहब की तेरहवीं का आयोजन देख पूरा मोहल्ला तो क्या, पूरा कस्बा भी वाह.वाह कर उठा। जीवन तो शान से जिया ही, अब मृत्योपरांत भी उनकी सद्गति निश्चित थी। सारे रीति-रिवाज़, दान-पुण्य... हर परम्परा का विशेष ध्यान रखा था उनकी पत्नी ने। हर जुबान पर आज उनकी तारीफ थी।

वैसे उनकी इन दूसरी पत्नी को लेकर पहले सबके मन में संशय था। रॉय साहब जैसे सख्त मिज़ाज, औरतों पर सारी पाबन्दियाँ थोपने वाले, पर अपनी रंगीन तबियत के लिए मशहूर इंसान के साथ भला कौन निभा सकता था। लेकिन उम्र में उनसे 20 साल छोटी, आशा ने उनकी सेवा में शिकायत का एक भी मौका नहीं दिया था।

और आज तो सभी उनकी पति-भक्ति के कायल हो गए थे। भोज के बाद से सब उन्हें ढूँढ़ रहे थे। पर वो कहीं नहीं मिलीं। अन्तत:सब उनके कमरे के बन्द दरवाजे के सामने जा पहुँचे।

काफी देर तक पुकारने और बहुत जोर देने से भी वह नहीं खुला, तो सबके मन में आशंकाएँ सिर उठाने लगीं। खास तौर से सुधा के, जो कहने को तो सौतेली बेटी थी। लेकिन हमउम्र आशा से उसके मोह के धागे जुड़े हुए थे। कहीं रॉय साहब के जाने के दु:ख में... उन्होंने कुछ...

सुधा बहुत चिंतित थी।

आँखें पोंछतीं औरतें एक ओर हो गयीं और पुरुषों ने एकजुट होकर धक्का मार दरवाजा तोड़ गिराया। सुधा अंदर घुसी और दृश्य देख भौंचक्की रह गयी।

अंदर मेज पर एक थाल में वो सारे पकवान और मिठाइयाँ वगैरह रखे थे जो आज तेरहवीं के भोज में बने थे। हर एक का बस एक-एक कौर तोड़ा गया था।

उसकी हैरान आँखें पलंग की ओर घूम गयीं। सुंदर लाल साड़ी पहने, पूरा श्रृंगार किये हुए बिस्तर पर आशा बेसुध सोई हुई थी। उसके चेहरे पर पहली बार भरपूर मुस्कान थी... और मुक्ति की चमक।

सुधा अधिक न देख सकी। सुबकती हुई-सी बाहर निकल गयी।

संपर्क- 503, हर्षित अपार्टमेंट्स, ए पी सेन रोड, चार बाग, लखनऊ-226001

शादी की साल गिरह

जगदीश नारायण राय

अचानक फोन की घंटी बजी। रवि को ऐसा लगा जैसे आज किसी ने शादी की साल गिरह पर बधाई देने के लिए फोन किया होगा, लेकिन यह तो अवनी का फोन था। बड़ी खुशी से बोली, 'हमारे-तुम्हारे वैवाहिक सम्बन्ध आज से समाप्त और सुनो! अपने घरवालों को भी अच्छी तरह बता देना।'

रवि के पैरों तले जमीन मानो खिसकने लगी। सिर चकराने लगा। धैर्य डगमगाया और वह कुछ समय के लिए बेहोश हो गया। मुँह सूख गया चेहरा पीटना पड़ गया। अभी कुछ दिनों पहले ही दोनों दाम्पत्य सूत्र में बँधे थे। अग्नि के फेरे लिए थे और आजीवन एक-दूसरे का साथ देने के लिए वचन-बद्ध भी हुए थे। अवनी अति सुयोग्य, तेज-तर्रार थी। महत्त्वाकांक्षा के हर शिखर को वह पल भर में छू लेना चाहती थी। अवनी आधुनिकता की हर खुशी को अपनी जिन्दगी का हिस्सा बना लेना चाहती थी। रवि अति गम्भीर, शान्त, सादगी प्रिय और आधुनिकता की चकाचौंध से बेखबर था। युवा मानस की बुरी आदतों से दूर वह सादगी की अपनी दुनिया में मस्त रहता था। वह जानता था कि उसके एवं उसकी पत्नी के स्वभाव में जमीन आसमान का अन्तर है, फिर भी खुश था इस बात को लेकर कि उसकी पत्नी अगर उसका साथ देगी तो होटल से प्राप्त कम वेतन में भी वह अपनी खुशियों के सोन महल सजा लेगा। अवनी सरकारी सेवा में अच्छे पद पर थी। वह अपेक्षा करती थी कि रवि भी अच्छी नौकरी के लिए हाथ-पाँव मारे और उसी की तरह...। रवि को लग रहा था कि वह प्रतियोगी परीक्षाओं में अवनी की तरह सफलता प्राप्त नहीं कर पाएगा। वह जहाँ है जितना मिल रहा है, उसके लिए पर्याप्त है। कोई बुरा व्यसन है नहीं अत: अनावश्यक हाथ-पाँव क्यों मारे, रवि के इस स्वभाव से अवनी को चिढ़-सी होने लगी। वह रवि को बुरा-भला कहने लगी।

यद्यपि एक साल तक सास में उसे आदर्श सास की छवि नजर आती थी। ससुर आदर्श ससुर थे परन्तु नफरत की आँधी ने सम्बन्धों के ताने-पाने को चीर कर रख दिया।

रवि ने बार-बार नफरत की आग बुझाने की कोशिश की। कई बार उसने भूलों के लिए क्षमा याचना भी की परन्तु इससे अवनी के तेवर और तलख होने लगे। रवि ने अपनी भावनाओं को व्यक्त करते हुए माँ से कहा– माँ! मेरी गाढ़ी कमाई के पैसे अवनी खर्च कर देती हे और मैं अपने खाते से उड़ती रकम को देखकर सन्न रह जाता हूँ। इसीलिए मैंने उससे आज ए.टी.एम. माँग लिया।

'इस पर वह नाराज तो अवश्य हुई होगी।' माँ ने कहा। रवि ने बताया कि आखिर वह कब तक...। माँ ने दाम्पत्य जीवन के मूल्यों को समझाते हुए कहा– 'देखो रवि! तुम उसे समझो। वह प्यार में पली है अत: उसमें हठधर्मिता भी है लेकिन तुम्हें ऊपर उठाने के लिए वह हर सम्भव प्रयास भी तो करती है। सुयोग्य है वह और उसमें सहयोग की भी भावना है।' रवि ने कहा– 'परन्तु अब तो...।'

'समय सब कुछ ठीक कर देगा बेटा! धीरज रखो।' रवि की आँखों में आँसू थे। वह कह रहा था– 'माँ! मैं अवनी पर बोझ बन गया हूँ न। मैं गाड़ी पर बैठाकर उसे घुमा नहीं सकता। उसे होटल में खाना नहीं खिला सकता। उसके साथ सिनेमा नहीं जाता, बस यही है न मेरी कमजोरी। माँ! मैं शरीर से सुन्दर हूँ, शराब नहीं पीता हूँ, पान, तम्बाकू, सिगरेट और नशेबाजी से दूर रहता हूँ। मैं अवनी से प्यार करता हूँ, फिर भी वह मुझे क्यों... ?'

अवनी से डरकर दूर-दूर रहने लगा। धीरे-धीरे उसमें हीन भावना पनपने लगी। इसके ठीक विपरीत अवनी ने अपनी शिक्षा से और योग्यता से अपनी अलग पहचान बनाई। प्रशंसा की अमृत वर्षा में नहाकर अवनी अहं का शिकार हो गई। उसे मायके और ससुराल में भी खोट नजर आने लगी। भारतीयता और दाम्पत्य जीवन के सनातनी पैमाने भी उसकी दृष्टि में बौने हो गए। अवनी का अभिमान उसे रवि से दूर रखने लगा और रवि की हीनभावना उसे अवनी से दूरी बनाने के लिए विवश करने लगी। इस दूरी की जहरीली हवा तब और विषाक्त हो गई जब अवनी का स्थानान्तरण कहीं और हो गया। अवनी को अकेलापन अब रास आने लगा और रवि के लिए अकेलापन विवशता थी। रवि के निकट जाने पर अवनी उसे बेरहमी से डाँटती जैसे रवि उसका पति नहीं बल्कि अनपढ़ नौकर से गया

बीता है। यद्यपि रवि ने बारहवीं पास करने के बाद होटल प्रबन्धन का कोर्स किया था और शहर के प्रतिष्ठित होटल में कार्यरत था। वह उदास मन से सोचता कि कितना अच्छा होता अगर अवनी उसके साथ बैठकर प्रेम से बातें करती परन्तु यह क्या अवनी ने तो फोन के माध्यम से भी रवि से बातें करने में अरुचि दिखाने लगी। और धीरे-धीरे उसने फोन करना और रवि के फोन को सुनना भी त्याग दिया।

रवि के सास-ससुर जो कल तक दामाद का आवभगत करते थे वे भी उसे निकम्मा समझने लगे। उन्होंने साफ-साफ कहना शुरू कर दिया कि बेटी की शादी में धोखा हो गया। लम्बे समय तक जाँच-परख के बावजूद अब उन्हें शादी के खोट नजर आने लगी। इधर अवनी ने भी ससुराल वालों में कमियाँ तलाशनी शुरू कर दी।

एक दिन अवनी अपने मायके आई। रवि ने कहा– अवनी! मैं होटल की नौकरी छोड़ दूँगा। तुम्हारे साथ प्रेम के कुछ पल बिताऊँगा। गाड़ी भी सीख रहा हूँ और धीरे-धीरे बहुत अच्छी तरह चलाने लगूँगा। तुम्हारे हर अरमान को पूरा करूँगा। अब तो मैं अपने स्वतन्त्र व्यापार का स्वतन्त्र मालिक हूँ। अवनी के अन्दर का जवालामुखी तो अब दिन-रात धधकता रहता है, शायद कोई मंथरा उसे मिल गई है। अवनी ने होंठों की प्रत्यंचा खींचकर वाणी के जहरीले बाणों को छोड़ दिया– 'रवि! चुप रहो, बकवास मत करो, बहुत हो चुका तुम्हारा ड्रामा और ध्यान से सुन लो अगर तुम मेरे नजदीक आए तो मैं तुम्हें चाकू मार दूँगी।' रवि के रहे-सहे सपनों को जैसे किसी ने निचोड़ दिया हो। जिस अवनी को पाकर वह कभी धन्य हो गया था। ईश्वर को लाख-लाख दुआएँ दिया थी, वही अवनी वज्र प्रहार कर देगी, ऐसी कल्पना रवि ने नहीं की थी। उदास मन से जुए में हारे जुआरी की तरह घर लौटते समय रवि चिन्ता के गहरे सागर में डूब रहा था परन्तु जैसे हार के बाद पुनः जीत की लालसा जुआरी को द्यूत स्थली तक खींच ले जाती है उसी लालसा से रवि बार-बार हारी बाजी को जीतने की लालसा से उस स्थल तक जाना चाहता है जहाँ रहती है अवनी। रवि त्याग एवं मोह के झूले में झूल रहा है, परन्तु खुश है कि अभी माता-पिता के प्यार के बरगद की छाँव उसे हर तपन से बचाएगी। साल गिरह फिर आएगी। फिर यादों की बारातें सजेंगी पता नहीं उसमें अवनी होगी या कोई और।

प्रधान सचिव, हि.सा. क. परिषद, पोर्टब्लेयर

....*पृष्ठ 29 का शेष*

उसी शाम को हिन्दू कबूतर आचारज जी के पास पहुँचा। अपनी लड़की के लिए रिश्ता माँगा, आचार्य जी भड़क गए। चोटी में गाँठ बाँधते हुए चिल्लाए, 'स्साले तेरी ये औकात... निचली जाति के कबूतर, हम ब्राह्मण कबूतरों के छोकरे का रिश्ता मांग रहा है।'

कबूतर का मन खिन्न हो गया। वह तराजू, तलवार सबके पास गया। सबने दुत्कार दिया। एक बिन मांगी सलाह सबने दी, 'ब्याह अपनी जात में ही करना चाहिए, वरना बड़ा कुजाता हो सकता है।'

जब कबूतर शाम को घोंसले में लौटा तो बहुत गुस्से में था। उसने कौए को बुलाया। उससे काना फूसी की, फिर किराए पर एक लाउडस्पीकर लाया और उसमें अपनी चोंच लगाकर घोषणा कर दी–

'मैं कबूतर पूरे होशो हवास में घोषणा करता हूँ कि मैं अपना धर्म त्याग रहा हूँ। मैं यह भी घोषणा करता हूँ कि मैं अब कोई भी धर्म नहीं अपनाऊँगा। मेरा अब कोई धर्म नहीं रहेगा, मैं अब से अधर्मी हूँ।'

मंदिर, मस्जिद, गिरिजाघरों में बैठे कबूतरों के ठेकेदारों ने भी ये घोषणा सुनी। वे चौंक गए! राम राम ...या अल्लाह ...ओह गॉड ...ये क्या हुआ? हमारे रहते कोई बिना धर्म के कैसे रह सकता है? ऐसे नीच, कमीने, रास्कल को हम जीने नहीं देंगे। खंजर, तलवारें, रिवाल्वरें तन गयीं। कबूतर को धमकी दी गयी; पर कबूतर ठहरा जिद्दी, ना माना।

फिर क्या था! एक साथ खंजर, तलवार, गोली सब चलीं। अधर्मी कबूतर मारा गया। जमीन उसके खून से लाल हो गयी। दाढ़ी, तिलक, कोट-पेंट सबको शान्ति मिल गयी।

कबूतरी ने कबूतर की लाश देखी तो चिल्ला चिल्लाकर रोने लगी। उसका रोना सुनकर तिलक, दाढ़ी कोट पैंट सब उसके पास इकट्ठे हो गए और उसे अपने अपने धर्म की अच्छाईयाँ गिनाने लगे। उसके बाद वे कुछ बड़बड़ाते हुए चले गए!

अब कबूतरी उदास है, नाराज है, रूठी हुई है पर वह भला कब तक नहीं मानेगी? बकरे की माँ कब तक खैर मनाएगी। वह कबूतर की तरह अधर्मी बनकर जीना चाहती है पर उसे और उसके बच्चों को अधर्मी बनकर जीने कौन देगा?

अधर्मी कबूतर का हश्र तो उसने देख ही लिया है ना!

सम्पर्क–जी 186ए, एच आई जी, फ्लैट्स प्रताप विहार,
गाजियाबाद-201009 उत्तर प्रदेश मो 9311660077

कहीं देर न हो जाए

डॉ. पूरनसिंह

उनके हाथों में भाले, त्रिशूल और फरसे थे। वे संख्या में बहुत ज्यादा थे। वे चीख रहे थे और नारे भी लगा रहे थे–'हर हर महादेव!', 'भारत माता की जय', 'जय बजरंग बली।'

उनका निशाना कस्बे में रह रहे एक मात्र मुस्लिम रहमत मियाँ का परिवार था। रहमत मियाँ पक्के नमाजी हैं। अपने धर्म का ही नहीं, सभी धर्मों का सम्मान करते हैं। परिवार में उनकी बुजुर्ग अम्मीजान के अलावा एक बेटा, एक बेटी और बेइंतिहाँ प्यार करने वाली बेहद सुन्दर पत्नी है।

जब उन्मादित भीड़ उनके घर पर पहुँची, रहमत मियाँ अपने परिवार के साथ बैठे हँस-हँसकर बातें कर रहे थे।

'मारो, मारो, मार डाल!' कहती हुई भीड़ टूट पड़ी थी। रहमत मियाँ नहीं समझ पाए थे कि उनका अपराध क्या है।

'क्यों मार डालना चाहते हो, मुझे और मेरे परिवार को?' हाथ जोड़ते हुए घबराकर चीख उठे थे रहमत मियाँ।

हालाँकि उन्मादी उनकी बात नहीं सुन रहे थे, फिर भी एक समझदार-सा व्यक्ति बोला, 'अरे भाईयो, शांत हो जाओ। पहले इससे सही बात जान तो लो। कहीं ऐसा न हो कि इसकी कोई गलती ही न हो।'

'नहीं, शर्मा जी। मैंने इसे गाय का मांस लाते देखा है।' हाथ में फरसा लिए एक चिंघाड़ा था।

'गाय हमारी माता है और ये काफिर उसी का मांस खाते हैं। इन्हें तो जिन्दा नहीं छोड़ना है।' महाराणा प्रताप के सदृश भाला थामे दूसरा गरजा था।

शर्माजी थोड़े-से शांत प्रकृति के व्यक्ति थे, सो बोले, 'रहमत मियाँ, सच क्या है, बताओ? देख लो, तुम्हारे झूठ बोलने का क्या मतलब हो सकता है।'

'आपसे एक इल्तजा है। पहले आप मेरे घर की तलाशी ले लें। अगर मेरे घर में गाय का गोश्त निकल आए तो हम पाँचों को आप अभी के अभी कत्ल कर दें।' अपनी ईमानदारी और नेक-नीयती पर पूरा भरोसा था रहमत मियाँ को।

'ये मीठी-मीठी बातें बनाकर उल्लू बनाना चाहता है, शर्माजी। इसकी एक न सुनो। मारो, मार डालो, अभी।' हाथ में त्रिशूल पकड़े, बड़े से पेटवाला, त्रिपुण्डधारी, जनेऊ खींचता हुआ कोई बोला था।

'नहीं, रहमत मियाँ की बात तो माननी ही होगी।' शर्मा जी बोले थे।

और भीड़ उनके घर में पिल पड़ी थी। एक-एक चीज बिखेर दी थी। कोना-कोना देख मारा था। कहीं कुछ नहीं मिला था। सभी शर्मसार थे कि कोई गुर्राया, 'वो काली वाली पोलिथिन कहाँ है रहमत मियाँ, जिसमें तू गाय माता का...।'

'अच्छा, वह काली वाली पोलीथिन!' इस बार रहमत मियाँ की पत्नी बोली थी।

'हाँ, वही।'

रहमत मियाँ की पत्नी काली वाली पोलीथिन ले आई थी। इसके पहले कि वे उसे खोलती किसी ने उनके हाथ से छीन ली थी पोलीथीन, और एक ही पल में उसमें रखी वस्तुएँ बिखेर दी थीं सभी के सामने। चारों और खील बतासे और चीनी से बने घोड़ा, हाथी, ऊँट बिखर गए थे।

अब सभी सन्न थे, मानो तूफान के बाद की शांति छा गई हो कि रहमत मियाँ बोले, 'परसों... परसों दीवाली है... इसीलिए हम भी खील-बतासे ले आए थे। हमारे बच्चों ने भी जिद की थी के वे भी खील बतासे खाएँगे। वे भी दिवाली मनाते हैं।'

'तो तूने ये बात पहले क्यों नहीं बताई?' कोई अब भी बेशर्म बना हुआ था।

'आपने मौका ही नहीं दिया!' रहमत मियाँ माथे का पसीना पोंछते हुए बोले थे।

किसी के पास कोई जवाब नहीं था।

'एक बात कहूँ आपसे?' बोले थे रहमत मियाँ।

'....'

'बहुत सुन्दर देश है हमारा। इसे धर्म और सम्प्रदाय के नाम पर कलंकित मत करो। बहुत आसान है किसी को मार डालना। बिल्कुल असंभव है किसी को जीवन दे पाना। एक बार प्यार से रहकर तो देखो।... अगर ऐसा नहीं किया तो ऐसा न हो कि देर हो जाए और हम सभी के हाथों में कुछ न रहे। मानकर तो देखो मेरी बात।' और इतना कहकर रहमत मियाँ ने हाथ जोड़ दिए थे।

उनकी बात सुनकर हवा में लहराते, फरसे, भाले, तलवारें और त्रिशूल नीचे झुक गए थे और उन्हीं के साथ झुके हुए थे सभी के सिर। तभी शर्मा जी ने अपनी दोनो बाँहें फैला दी थीं, जिनमें रहमत मियाँ समा जाना चाहते थे।

संपर्क– 240, बाबा फरीदपुरी, वेस्ट पटेल नगर, नई दिल्ली-110008 मो. 98688 46388

एक मराठी कहानी
हिंदी में अनुवाद स्वयं लेखिका द्वारा

गुब्बारे

रश्मि पदवाड़ मदनकर

आज सुबह आरव चोरी करते हुए पकड़ा गया। पिछले कुछ दिनों से, उसके बर्ताव से शशांक परेशान हो गया था। आज उसने उसको बहुत पीटा। उसकी पीठ पर, गाल पर, निशान बन गए थे। हालाँकि छह साल के उस बेटे को कुछ कमी न खले, इसके लिए वह दिन-रात मेहनत करता था। लेकिन, कल से कुछ ज्यादा ही गुस्से में था।

कल टीचर-पैरेंट मीटिंग थी स्कूल में। रिजल्ट कमजोर आया था। साथ ही, टीचर की टिप्पणी-''आजकल आरव का स्कूल में ध्यान नहीं होता है। वह अपने ही खयालों में खोया रहता है।''

टीचर की इन बातों से दुखी होकर वह झुँझला-सा गया था। शायद मुझमें ही कुछ कमी रह गयी है। यह सोच-सोचकर आत्मग्लानि से उसका मन भर आया था। ऐसा गिल्ट आने पर वह क्या, कोई भी चिड़चिड़ा हो सकता था।

उस पर, आज यह एक और पराक्रम आरव ने कर दिया। छुपकर जेब से पैसे निकालते हुए स्वयं शशांक ने उसे देख लिया। उसका पारा जमकर चढ़ा। उसने आपा खो दिया और बेटे की जमकर कुटाई कर दी। मालती बेचारी कसमसाई देखती रही थी। वह बचाव के लिए बीच में आने लगी तो शशांक झुँझलाकर बोला, ''रुक जाओ माँ, तुम्हारे ही लाड़-प्यार से बिगड़ गया है ये... आज इसे सबक ही सिखाना है। खबरदार, इसे अगर कुछ भी खाने-पीने को दिया, और कोई जरुरत नहीं उससे बात भी करने की। चेतावनी ही समझो इसे।''

आरव रोते हुए अंदर के कमरे में दौड़ गया... दोपहर हो गयी... शशांक दिनभर ड्राइंग रूम में बैठा रहा। आरव के कमरे में जाने का रास्ता वहीं से होकर जाता था।

उसे पता नहीं कहाँ-कहाँ लगा होगा। भूखा ही सो तो नहीं गया होगा... सोच-सोचकर मालती की जान नीचे-ऊपर होती रही। छोटे-से बच्चे के जन्मदिन के एक दिन पहले उसे इस तरह पिटाई सहनी पड़ी। यह सोचकर भी उसकी आँखें भरकर आती रहीं। शशांक के गुस्से से वह अच्छी तरह वाकिफ थी। फिर भी, थोड़ी हिम्मत करके गुस्से का नाटक करते हुए, ''रुको, मैं ही जवाब पूछती हूँ उस बदमाश से... ऐसे कैसे इस तरह बर्ताव कर सकता है...'' कहकर उसके कमरे की तरफ जाने का प्रयास करने लगी। शशांक ने आँख दिखाईं। वह वैसे ही चुपचाप पीछे मुड़ गयी।

दोपहर के 3 बज गए। मालती का मन ही नहीं लग रहा था। बहुत चाल-बिचलसी हो रखी थी। क्या करे, कुछ सूझ नहीं रहा था। आरव का मासूम-सा चेहरा नजरों के सामने आता रहा। उसे गोद में लेकर उसका पसंदीदा दाल-चावल खिलाने को वह बेचैन हुई जा रही थी। आरव की याद से रह-रहकर उसकी आँखें भर आ रही थीं। शशांक उसके टैब में सर डालकर बैठा हुआ था... कैसे उठाये अब इसे ...

वो बाहर आई, ''शशांक, साइन में न जाने क्यों दर्द हो रहा है सुबह से, जी भी घबरा रहा है, बीपी की गोलियाँ ख़तम हो गयीं कल, आज ली ही नहीं, इसलिए तो नहीं...''

''तुम्हारी गोलियाँ खत्म हो गयीं और तुम मुझे अब बता रहीं हो? तुम्हें कितनी बार कहा है माँ, दवाइयाँ खत्म होने से पहले बता दिया करो। तुम क्यों नहीं समझती कि तुम्हारा अच्छा रहना कितना जरूरी है।'' इतना कहकर की स्टैंड से गाड़ी की चाबियाँ उठाकर शशांक निकल पड़ा। मालती ने जल्दी से चीज-रोटी का रोल बनाया और थाली में दाल-चावल और रोल लेकर आरव के कमरे में गयी... आरव छत की ओर देखते हुए बेड पर शांत लेटा हुआ था।

'मिंटू' उसने बड़े लाड़ से पुकारा... पुकार सुनते ही आरव सयाने बच्चे की तरह उठकर बैठ गया। मालती ने उसे गले लगाया... 'बहोत लगा मेरे बच्चू को' कहकर उसके माथे को चूम लिया।

आरव ने सर हिलाकर ही 'ना' कहा... उसकी आँखों में पानी भर गया।

''चलो जल्दी से खाना खा लो शोना, देखो सब-कुछ तुम्हारी पसंद का है।''

''दादी...'' आरव की मासूम-सी आवाज... फिर, दो मिनट का सन्नाटा।

''दादी, मुझे नहीं चाहिए खाना, उसके बदले मुझे 20 रुपये दोगी?'' मालती का दिल दहल गया। आज इसी हरकत की वजह से इसे इतनी पिटाई सहनी पड़ी और अभी भी इसे पैसे की ही पड़ी है। ''यह क्या जिद लगा रखी है आरव, क्यों चाहिए तुम्हे पैसे?''

उसने भी डाँटते हुए आँखें निकालीं, ''दादी, मुझे न... गैसवाला गुब्बारा खरीदना है।''

''गुब्बारों के लिए आरव! इतनी छोटी-सी चीज के लिए तुम चोरी कर रहे थे, उसके लिए इतना मार खाया, इतने शैतान कब से बन गए।'' दादी नाराज होकर जाने लगी। आरव ने उसका हाथ थाम लिया, ''दादी, मुझे ना उस गुब्बारे पर 'सॉरी' लिखकर आसमान में छोड़ना है! कल मेरा जन्मदिन है ना... मेरा जनम हुवा तभी तो माँ को बहोत दर्द सहना पड़ा था, इसी वजह से वो हमें छोड़कर चली गयी ना। मुझे उनसे माफी मांगनी है... बस एक बार।''

मालती वहीं पर थबककर रह गयी। इतने छोटे.से बच्चे के मुँह से इतनी बड़ी बात सुनकर वह सन्न रह गयी। उसने उस बिन माँ के बच्चे को गोदी में खींच लिया। और फिर दादी-पोता दोनों, कितने ही देर तक आँसुओं से सराबोर होते रहे...

सम्पर्क–रश्मि पदवाड़ मदनकर, प्लॉट न. 29, महालक्ष्मी अपार्टमेंट, पहली मंजिल सेवादल नगर, बेसा रोड, नागपुर-440027 मो. 8208920440/7720001132

दो ग़ज़लें

डॉ. नरेश

(1)

सच को कब तक झुठलाऊँ।
कब तक खुद को धोखा दूँ।

किसके दर पर दस्तक दूँ।
किससे तेरा पता पूछूँ।

काश ऐसा भी हो जाए,
तू ही दिखे जिधर देखूँ।

यह दुविधा हर मोड़ पे थी,
आगे बढ़ूँ या यहीं रुकूँ।

तुमको खोकर बचा है क्या,
मित्र! मैं कैसे धीर धरूँ।

मुझसे पूछो प्यास का अर्थ,
सहरा-सहरा भटका हूँ।

मुझको शरण दे कौन 'नरेश'
मैं अपने से भागा हूँ।

(2)

रात विरह की अद्भुत है
तारिका-मंडल पदच्युत है।

दिल तो तुमको दे ही चुके,
लो अब जान भी प्रस्तुत है।

सुख भी आएगा दुख के बाद,
हर रजनी प्रभातयुत है।

बोलने दो हर दादुर को,
लोकतन्त्र बरखा-रुत है।

सत्य किसे मालूम यहाँ,
ज्ञान जो है सब जनश्रुत है।

कैसे होगा वह शालीन
जो सत्ता-मद में धुत है।

दौड़ती है रग-रग में 'नरेश'
शब्द-शक्ति वह विद्युत है।

169, सेक्टर-17, पंचकूला-134109

ग़ज़ल

रिदा खान

ख़फ़ा होकर कद प्यार का यूँ बढ़ायें,
कभी तुम मनाओ कभी हम मनाये,
अगर चाहते हो कि उकबा बनायें,
तो माँ-बाप का दिल कभी न दुखायें,
जुबाँ पर न आएगा हरफे शिकायत,
अगर रह गए हो सितम और ढायें,
चिरागे मोहब्बत हमेशा जलेगा,
हवाओं से कह दो कि फिर आजमायें,
गुलाबे मोहब्बत को अब शौक दिल से,
जुदा न कर पाएगी ये ज़ालिम हवाएँ,
सितम करते हैं माँओं के बेटे,
मगर माँ से मिलती है उनको दुआएँ,
मोहब्बत में तारीख ऐसी लिखें हम,
न तुम भूल पाओ न हम भूल पाएँ,
बयां हो ही जाएगा चेहरे से एक दिन,
ये राज-ए-मोहब्बत कहाँ तक छुपाएँ
नहीं माँ से बढ़कर कोई मेहरबां हैं,
मेरी इल्तिजा है न माँ को सताएँ,
खुदा के लिए दर गुजर करना उनका
'रिदा' से हुई हो गर खताएँ!!

पलिया कलां (खीरी) 262902
मो.- 7860250972

आशीष कंधवे की कविताएँ

॥ 1 ॥

मैं देश बोल रहा हूँ...

सुनो
मैं देश बोल रहा हूँ
शब्द गुमराह करने के लिए नहीं होते
शब्द राह दिखाने के लिए होते हैं
शब्द शुद्ध होते हैं
निर्दोष और निर्विकार

पर तुम भी शब्दों का प्रयोग
गुमराह करने के लिए करते हो
वोट के लिए करते हो
कुर्सी के लिए करते हो
वैसे ही जैसे बाकी करते थे?
तुम भी राजनीतिज्ञ जो ठहरे...!

सुनो
मैं देश बोल रहा हूँ

सोने की चिड़िया कहलाने वाला यह देश
गौरैया चिड़िया का अस्तिव भी नहीं बचा पा रहा
और तुम लालकिले पर चढ़ कर वादे किए जा रहे हो
जनता का क्या
जी सकती है तो जिए नहीं तो मर जाये
बस मरने के पहले अपना वोट दे जाना
लोकतंत्र को समझते हो ना

सुनो
मैं देश बोल रहा हूँ

तुम्हारे आने से मुझे भी कुछ आस जगी थी
लगता था भारत बदलेगा
अब शब्द सोच समझ कर बोले जाएँगे
वादे निभाये जाएँगे
विद्यालय सुधारे जाएँगे
अस्पताल सुधारे जाएँगे
सत्य का परचम लहराएगा
कश्मीर में केशर लहलहायेगा
किसान, मजदूर भूखे नहीं सोएँगे
भष्ट्राचार कम होगा
सचमुच भारत में दम होगा

मैं देश बोल रहा हूँ
सुनो
तुम्हें भी जाना होगा
तुम हमेशा के लिए नहीं आये हो
लोकतंत्र में जब जनता जाग जाती है
तो कुर्सी के पाये भी तुम्हे नहीं पहचानेंगे
जाने के पहले अपने शब्दों का मान रखना

आजकल तुम मुस्कुराते हो तो
आँखें लाल हो जाती हैं तुम्हारी
क्योंकि तुम भी शब्दों से खेल रहे हो
सत्य तो जानते ही हो तुम
'श्री राम' भी तुम से नाराज हैं
मंदिर तो एक दिन बन जायेगा
लेकिन अगर जनता की आँखें लाल हो गई तो...
तुम लालकिला के मैदान में दंड बैठक लगाना

मेरे सिर में दर्द होता है
जब मैं तुम्हें फिर से देखता हूं
बहुत सारे सपने याद आते हैं
आपने जो वादे किये थे
वो देश के सड़कों पर कुचले जा रहे हैं
मैं डरने लगा हूँ
देश के साथ तुम हो तो सही
पर उतने मजबूत नहीं जितना हमने समझा था

और हाँ
तुम देश से बाहर हो

देश में रहते हुए भी
यह वास्तविकता के शब्द है
मैं कुछ नहीं पूछना चाहता हूँ
तुम सब जानते हो

सुनो
मैं देश बोल रहा हूँ
क्योंकि बहुत से लोगों ने मुझे धोखा दिया है
तुम मत देना
बहुत से लोग मजाक कर रहे हैं
और मैं रो रहा हूँ

सुनो
मैं देश बोल रहा हूँ
मैं भारत...!

॥ 2 ॥

खुरदुरा प्रेम

मैं नहीं कहूँगा कि तुम मत जाओ
वास्तव में तुम मुझे आधा जानती हो
पर जा ही रही हो तो
कुछ चीजें
अपने साथ ले जाओ

हमारे खुरदुरे प्रेम की यादें
कमरे के कोने ने चुपचाप मस्कुरा रहा
हमारी उम्मीदें का गुलदस्ता
मेरा कसैला प्यार भी ले जाओ
शायद इसकी आवश्यकता होगी तुम्हें
जब मैं तुम्हारे पास नहीं होऊंगा...!

मैं जानता हूँ कि
मुझे कुछ नहीं बताना चाहिए तुम्हें
तुम भी तो उतना ही जानती हो
जितना मैं

लेकिन मुझे कुछ चीजों के बारे में कहना है
ये तुम नहीं जानती हो
ये तो मुझे बताना ही पड़ेगा
हाँए
पर मैं पहली और आखिरी बार बता रहा हूँ कि

बहुत बार तुमने
मुझे बेलगाम देखा है
बिल्कुल जंगली
लेकिन मेरे भीतर एक आदमी भी रहता है
कुछ समय के लिए मैं जंगली बन जाता हूँ
मैं मानता भी हूँ पर
सुनो तुम मुझे समझो
मेरे जंगलीपन को नज़रंदाज़ कर के

आखिर पुरुष हूँ ना मैं
तुम एक सहनशील स्त्री

मैं सभी रंगों में खुश नहीं रह सकता
मैं सभी मौसमों में मुस्कुरा भी नहीं सकता
मैं हर हाल में गुनगुना भी नहीं सकता
आखिर पुरुष हूँ ना मैं

मैं कोई प्रेम का देवता नहीं
मैं कोई चाँद का टुकड़ा नहीं
मैं कोई झील का कमल नहीं

समझ सको तो समझो
नहीं तो लौट जाओ
पर याद रखना
मैं पीछे से आवाज दूँगा
बस तुम अनसुना मत करना
मैं इतना ही कहूँगा
तुम एक बार फिर सोच लो...!

सम्पर्क– एडी-84-डी, शालीमार बाग, दिल्ली-110088

हिन्दी साहित्य कला परिषद्, पोर्ट ब्लेयर द्वारा स्वाधीनता दिवस 2018 की पूर्व संध्या पर आयोजित कवि सम्मेलन हेतु कविता

नमन उस मंच को

अशोक कुमार श्रीवास्तव 'अशोक'

हे मेरे प्रिय मंच
सागर पार हो तुम
पर तुम अक्सर यहाँ दिल्ली में
मुझे याद आते हो।

साठ वर्षों से अधिक पुराना
यह मंच
पोर्ट ब्लेयर शहर की
साहित्यिक,सांस्कृतिक गतिविधियों का केन्द्र।

याद आते हैं
इस मंच के संस्थापक
स्वर्गीय दुर्गाप्रसाद जी,
राजेन्द्र प्रताप सिंह जी,
पन्त जी, पिताश्री,
ईश्वरी प्रसाद गौड़ जी
और अनेकों साहित्य प्रेमी।

याद आती है इस मंच पर मंचित
वार्षिक रामलीला
और इस रामलीला के अनेकों पात्र–
रामस्वरूप बाली जी, सरजूलाल जी,
विश्वेन्द्र जी, मिश्रा जी, गीतांजलि जी....
और अनेकों कलाकार।

याद आती हैं
इस मंच पर आयोजित
अनेकों काव्य गोष्ठियाँ
और बहुभाषी उस नगर के
अनेकों कवि और उनकी सरस कवितायें।

हे मेरे प्रिय मंच
तुम बार-बार याद आते हो
बार-बार याद आते हो
और याद आते रहोगे....
याद आते रहोगे।

पता: फ्लैट न. 4044, सेक्टर बी 5 और 6 (गेट न. 1 के पास),
वसंत कुंज नई दिल्ली-110070. मो.:08587856637
ईमेल: aksrivastav2@gmail.com

शीश झुकाओ ससम्मान

सुविधा पंडित

है दारुण दशा, कैसा नशा
क्यों पर-भाषा से स्नेह?
अपनी प्यारी हिन्दी पर,
क्यों बरसे नहीं नेह का मेह?

क्यों हृदय व्यथित व्यग्र विकल,
क्यों कुंठित हुए विचार सकल?
क्यों उजड़ा माँ का निर्मल आँचल
क्यों भाव-भूमि संतप्त प्रतिपल?

गौरवशाली हिन्दी की
क्या स्थिति हुई है आज
करुण कहानी बनी हुई
बिगड़े सभी हैं साज

अरे युवाओ, क्या नहीं रगों में,
देश-प्रेम का ज्वार?
कैसे सह पाते हो अपनी
मातृ-भाषा का तिरस्कार?

आज देश के युवाओं का,
द्रवित हृदय से करती आह्वान,
अपनी मातृ-भाषा के सम्मुख,
शीश झुकाओ ससम्मान

अपनी भाषा के विदीर्ण हृदय का,
घाव नहीं भर पाये तो,
धिक्कार हमारे यौवन को,
कर्ज चुका ना पाये तो

हर एक जवानी ले प्रतिज्ञा,
माँ का शीश उठायेंगे
विश्व-पटल पर हिन्दी बोलेंगे,
हिन्दी में बतियायेंगे
विश्व-पटल पर हिन्दी बोलेंगे,
हिन्दी में बतियायेंगे

सम्पर्क–155 बी सरदारनगर शास्त्री स्कूल के पास, तलावड़ी
सर्कल के पास, अहमदाबाद-382475 (गुजरात)
मो-09429634785
इ-मेल– suvidhapandit77@gmail.com

पहचान

डॉ. मंजू नायर

हरियाली से लदे-लदे,
हरे-हरे नगीनों से
खाड़ी में डूबते तैरते
जंजीरों का रेला बनते
बंगाल की खाड़ी में सजते,
अंडमान निकोबार द्वीप कहलाते।

नारियलों का सेहरा सजाए
पहाड़ियों को घाटियों में पाटते
आदिवासियों का घरौंदा सजाए
मेघों के साये में पलते,
फुहारों के रिमझिम में भीगते
सदाबहार वनों से सजते
लहरों के गर्जन में झूमते
अंडमान निकोबार द्वीप कहलाते।

बैरन की ज्वाला में धधकतें
कोरलों की काया में डोलतें,
मैंग्रुव से खाड़ियों को भरते
सुन्दर तटों से रमणीक बनते
अंडमान निकोबार द्वीप कहलाते।

हरियाली से लदे-लदे
हरे-हरे नगीनों से
ड्यूगोंग, मेगापोड, जीवों संग
टील पडाक की प्रसिद्धि पाते
भूमध्य रेखा से सटे-सटे
मलाका स्टेट से जुड़े-जुड़े
डंकन व 10 चेनलों का साथ लिए।
अंडमान निकोबार द्वीप कहलाते।

ओंगी, जारवा, अंडमानी, सेंटिनल
आदिवासियों को पनाह देते
शॉम्पेन, निकोबारी बन्धुओं को समेटे,
आने जाने वालों सभी को पुचकारते,
लघु भारत की शान सँवारते,
अंडमान निकोबार द्वीप कहलाते।

शहीदों की थाती सँभालते,
स्वतन्त्रता की गरिमा संजोते,
सेल्युलर की शान सजाते
सुभाष से तिरंगा फहरवाते
अंडमान निकोबार द्वीप कहलाते।

प्रीति मीत की रीत सिखाते,
जात-पात की संकीर्णता मिटाते,
पर्यावरण की निर्मलता उगाहते
हिन्दी का आइना चमकाते,
देश प्रेम का ध्वज फहराते,
भारत की सुन्दरता निखारते,
अंडमान निकोबार द्वीप कहलाते।

सम्पर्क–दिलानीपुर, पोर्टब्लेयर

शाश्वत है आत्मा...

ऋता शुक्ल

दर्द की वसीयत का दाह लिए जाती है,
शाश्वत है आत्मा देह चली जाती है!
बरगद की घनी छाँव, बाबा माँ का दुलार,
कोख से कढ़े रिश्ते, नागफनी से चुभते,
तब भी दुआओं का दान दिए जाती है।
माटी की काया थी, माटी में बिखर गई,
साँस की गठरिया, गीता, पुराण बँधी
बरगद सी आन बान शान लिए जाती है।
अपनों का भरम नहीं, हर कोई अपना है,
मानुस की जात एक, नयन नीर कहता है।
गंगा-सी गरिमा का ज्ञान दिए जाती है,
शाश्वत है आत्मा, देह चली जाती है।

मोराबादी, राँची

कलियुग में

रितेश सिंह 'राही'

कलयुग में सीता राम के जैसा कहीं प्यार क्या मिलेगा?
महल छोड पति संग वन जाने को तैयार क्या मिलेगा?

भाई भाई में महाभारत तो देखों हर घर की कहानी।
कलयुग में राम लक्ष्मण के जैसा किरदार क्या मिलेगा?

देखो ना देवर भाभी के रिश्ते का अर्थ ही बदल गया है।
कलयुग में सीता माँ के लक्ष्मण-सा संस्कार क्या मिलेगा?

माता-पिता के वचनों का मान रखने पत्नी से दूर हो जाए अगर।
कलयुग में पति का उर्मिला सा करती इन्तजार क्या मिलेगा?

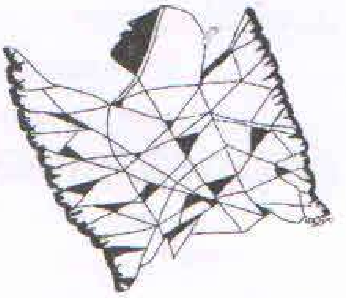

यहाँ हर स्त्री को कहते सुना, हर मर्द एक जैसे ही होते हैं।
कलयुग में सीता का राम पे जो था वो ऐतबार क्या मिलेगा?

चाहे कितने ही रावण हो जाए, स्त्री को छू भी न पाएँगे
कलयुग में सीता जैसी पतिव्रता का पारावार क्या मिलेगा?

यहाँ खुलेआम सड़कों पे लूटी जाती अबलाओं की अस्मत।
कलयुग में संयमी रावण-सा वफादार क्या मिलेगा?

तूने ही कहा था जब-जब धरा पे पाप बढ़ेगा जन्म लेगा तू।
कलयुग में किसी कोख से फिर तेरा अवतार क्या मिलेगा?

बलिया (उत्तरप्रदेश), मो. 8800151780

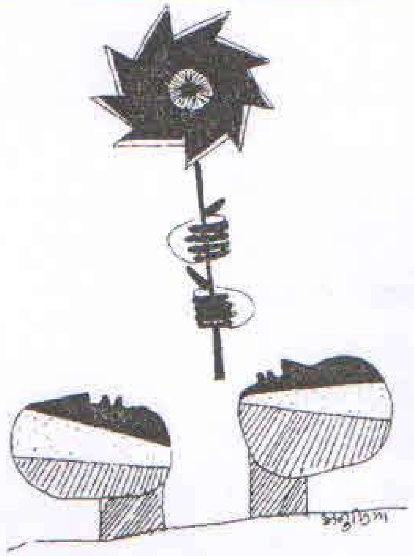

शहीदों को नमन

पं. बृजेश तिवारी

उन शहीदों को शत-शत नमन है,
जिनके बल पर ये सुन्दर चमन है॥

कर्म जीवन में था जिनके पूजा,
भारत माँ से बड़ा न कोई दूजा
उन शहीदों को श्रद्धासुमन है॥

जिनके साँसों में बसती आजादी
माँ की सेवा में सब कुछ लुटा दी,
कैसा सुन्दर सुनहरा अमन है॥

भारत माँ के वे आँखों के तारे
जुल्म सह के भी हिम्मत न हारे,
सेलयूलर जीवन में जिनके सफर है॥
जिनके बल पर ये सुन्दर चमन है॥

काला पानी में जीवन बिताया,
कदम पीछे कभी ना हटाया,
देश भक्तों के दिल में वतन है।
जिनके बल पर सुन्दर चमन है
उन शहीदों को सत-सत नमन है॥

राजस्थान मन्दिर, पोर्ट ब्लेयर, मो. 9434266753

नेता एक सुभाष था

डी.एम. सावित्री

आओ मिलकर विजय ज्योती जलाए,
शहीदों की याद में तिरंगा फहराए।
स्वयं गर्व से कहता भारत
नेता ऐसा सुभाष था।
जिनकी सुनकर आवाज,
जन-गण जागृत हुआ था।
उसके एक इशारे पर,
हजारों बलिवेदी पर चढ़ गए।
बड़े जिस ओर उसके कदम,
हजारों उस ओर बढ़ गए।

हिमालय से ऊँचा, अटल, अचल
उज्ज्वल हिम-सा शीतल शान्त था,
नेता ऐसा सुभाष था।
आकर इस धरा को आलोकित किया,
अभय शौर्य से शूरता दिखलाकर,
धरा पर आजाद हिन्द फौज बनाया।
विश्व वीर पुष्पतुंग गिरि श्रंग समान
उसके नाम को पंकज भी चूम रहा है।
लेकर अदम्य लहरों का साहस
हिन्द महासागर का वह रूप था
मानव ऐसा बना वह अनूप था
नेता ऐसा सुभाष था।
आओ मिलकर विजय ज्योती जलाए
शहीदों की याद में तिरंगा फहराएँ।

अपनी आजादी को हासिल करने को
'बढ़ो या मरो' का नारा बुलन्द किया।
सोने जैसा दिल वाला,
सोने की तराजू में तोला गया था।
हिन्दू न मुस्लिम न सिख इसाई,
हम एक हैं, एक होकर आओ लड़े
अंग्रेजों से हम लड़ाई।
उसने कहा था–
'तुम मुझे खून दो,
मैं तुमको आजादी दूँगा।'
नारा उसने ऐसा बुलन्द किया था,
नेता ऐसा सुभाष था।
आओ मिलकर विजय ज्योती जलाएँ
शहीदों की याद में तिरंगा फहराएँ।

सिंह की दहाड़ से अंग्रेजों को ललकारा
इस धरती को अपना देश कहकर
विजय को शंकनाद किया।
30 दिसम्बर 1943 को जिमखाना मैदान में
पहले आजादी का तिरंगा फहराया।
और स्वतन्त्र अण्डमान निकोबार
'शहीदों' का 'स्वराज्य' कहलाया।
आजादी का दिग्दर्शन करवाकर,
द्वीपवासियों को हरसाया था।
नेता ऐसा सुभाष था।
आओ मिलकर विजय ज्योति जलाए
शहीदों की याद में तिरंगा फहराएँ।

आजादी के उन बीते दिनों की,
साक्षी बनी खड़ी हैं ये शिलाएँ।
उन नादों को सुनाती है आज भी,
आता जाती सागर की तरंगे।
उस अमर सेनानी के नाम को
उसकी प्रतिमा को प्रणाम करें।
जिसने अपने जीवन कुसमों को
देश के नाम नेछावर कर दिया।
विष्णु सहश वह स्वतन्त्रता का गीत था
भारत माता के वीर सपूतों का वह मीत था।

नेता ऐसा सुभाष था।
आओ मिलकर विजय ज्योति जलाए
शहीदों की याद में तिरंगा फहराएँ।

हिन्द का था वह सिपाही,
हिन्द के नाम उसका जीवन था,
जय हिन्द को उजागर किया
जन जन से जय हिन्द कहलवाया था।
स्वयं रत्न था वो रत्नाकर
रत्न रंजित मानव नहीं भूमि का
वह तो भव का भूप था।
नेता ऐसा सुभाष था।
आओ मिलकर विजय ज्योती जलाए।
शहीदों की याद में तिरंगा फहराएँ।

सम्पर्क–मरीन हिल, परिजात निवास, पोर्ट ब्लेयर–744101

स्वप्न आँजी आँख

पं. गिरिमोहन गुरु

दृष्टि से तो नप चुका, आकाश सारा, अब धरा को नापना है

पार जाने के लिए तैराक धारों से लड़ा है,
भोर लाने के लिए विरही सितारों से लड़ा है

स्वप्न तो सब आँज बैठे हैं दृगों में, सत्य को अब आँजना है
दृष्टि से तो नप चुका आकाश सारा अब धरा को नापना है

हाथ जब ऊँचे किए विज्ञान ने नभ हुआ नीचा
एक ही संकल्प के संकेत ने सागर उलीचा

नभ क्षितिज की कल्पना के पंख ने सीमित बनाया
उर क्षितिज अब मापना है।
दृष्टि से तो नप चुका आकाश सारा अब धरा को नापना है॥

सम्पर्क–नर्मदा मन्दिरम् गृह निर्माण कालोनी,
होशंगाबाद (मध्यप्रदेश)

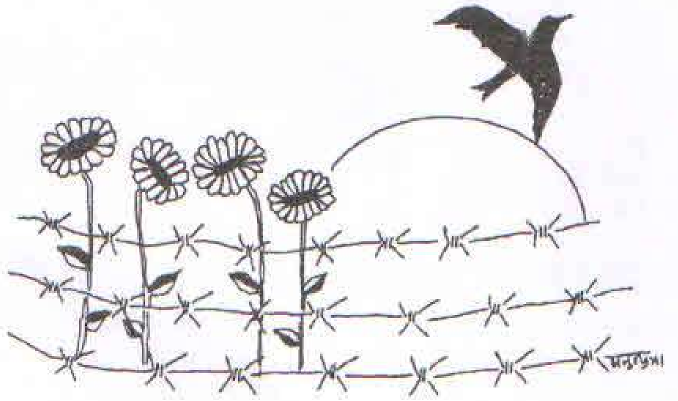

जरूरतें अभी कम करना है

शिवकुमार दुबे

धर्म है, अदृश्य
अस्थायें समाहित है
अन्तर्मन में जहाँ से शुरू होता है
उजाला और आस जीवन
वहीं से शुरू होता है
अंकुरित होते बीजों में
प्रस्फुटन का स्वभाव
वृक्षों में फल लगने की
स्वाभाविक प्रश्त्ति
जलस्त्रोतों का स्वाभाविक फूटना
जीवों का जन्मचक्र सभी कुछ
स्वाभाविक है, इस जगत में
पर अभी भी मानव की प्रगति
भौतिक सुखों पर आश्रित है
और कृत्रिम संसाधनों की अनगिनत
बढ़ोत्तरी हमें मानव से मानव
बनाने में मुश्किलें कर रही हैं उत्पन्न
उठो अभी, जागृत अवस्था
में चेतन से अवचेतन पर मत लौटो
अभी भी तापमान को कम किया
जा सकता है, इस आस में
कि अभी हमारी जरूरतें कुछ
ठंडें बस्ते में रखने लायक है।

जे-213 एस.एस. इन्फीनिटिव्स एम.आर. II
इन्दौर, मध्यप्रदेश–452010

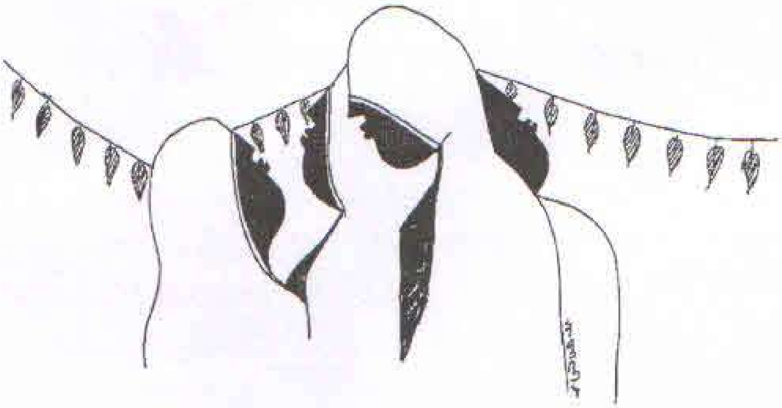

जेठ दुपहरी

अशोक 'आनन'

सांय-सांय करती–
जेठ दुपहरी।

मुट्ठी भर छाँव।
मिली न शहर-गाँव।
ठूँठ पर झुलसते,
पक्षियों के पाँव।
कोटर में जा दुबकी
भीड़– गिलहरी।

होंठ पपड़ाए।
नदियाँ और ताल।
सूरज ने नोंच ली;
कुओं की खाल।
लू झुलसी, बबूली
छाँव छरहरी।

गर्म-गर्म लूएँ।
चिपक, बदन छूएँ।
पिघलकर बदन का
पोर-पोर चूए।
अलाव जलाय बैठी–
रात मरमरी।

11/82, जूना बाजार, मक्सी, जिला शाजापुर (मध्यप्रदेश)
465106 मो.- 9977644232

नन्हीं चिड़िया

डॉ. रामनिवास 'मानव', डी.लिट्

दिन-भर फुदक-फुदककर
दाना चुगती, खेलती रहती है
नन्हीं चिड़िया।
दाना, खेल, फिर दाना।
और चलता रहता है यूँ ही
दाने और खेल का यह क्रम
दिन-भर, जीवन-भर।
समय आने पर
तिनका-तिनका जोड़-जोड़कर
घोंसला बनाती है नन्हीं चिड़िया।
फिर अंडें देती है,
अंडों को सेती है;
बच्चे निकलने पर
उन्हें चुग्गा भी खिलाती है,
दाना-दुनका चुनकर।
बड़े होकर
जब उड़ जाते हैं बच्चे,
लौट आती है नन्हीं चिड़िया
अपनी उसी दिनचर्या में
पहले की ही तरह–
जो कुछ हुआ, सब भूलकर।
लेकिन पक्के घर नहीं बनाती
कभी नन्ही चिड़िया।
दाना-दुनका जोड़-जोड़कर
घर भी नहीं भरती।
और तभी तो जीने के लिए
जीने से पहले नहीं मरती।
नन्ही चिड़िया
खेल समझती है जीवन को,
और खेल-खेल में जीती है
जीवन को जीवन-भर।

571, सेक्टर-1, पार्ट-2, करनाल (हरियाणा)
मो.- 01282-250055, 8053545632

पानी : एक मिथक

डॉ. स्नेहलता श्रीवास्तव

पानी
एक मिथक है
जिसे
रचा है
सूखे
काँपते
ओठों ने
प्यास से खिंचती
जुबानों ने।

पानी
एक अनुभूति है
जो आदमी को
बाँधती है
मारती भी है।
पानी
उपजाता है
सुनहली फसले
वही
पाला और ओले बनकर
चौपट कर देता है
भोले किसानों के
सतरंगी सपने।

पानी
एक विवशता है
अनकही कहानी है
जो
कही जाती है
आँखों की जुबानों से

पानी
मृगमरीचिका है
दौड़ाती है
पागल हिरनों को
रेगिस्तान में

पानी
मौत है
एक बड़ी लहर
जो मिटा देती है
समूचे वजूद को।

पानी
अमृत है
बरसता है
ममतामयी
आँखों से।

पानी
सृजन शक्ति है
तादात्म्य की संस्कृति
जिसके बिना
सब रेत है।

पानी
एक रसधार है
जो फूट पड़ती है
पहाड़ों की
छाती फोड़कर

पानी
एक गीत है
जो
कलकल करती सदानीरा
झर-झर बहते झरनों के
ओठों से
मुखरित होता है।

पानी
पहला प्यार है
जिसका
स्निग्ध स्पर्श
सिहरा देता है
प्रकृति का
रोम-रोम
पुलकित श्वास
सज जाती है
धानी चूनर

पानी
त्वरा है
विद्युतगति
दौड़ जाती है
समूची
सभ्यता की
रग-रग में
जगमगा उठती है
शहर की रंगीनियाँ
धर्रा उठते हैं
जड़ संयंत्र
और
सिमट जाता है
समूचा विश्व
एक ग्राम में।

पानी
कितना रसमय
कितना विकराल
एक साथ।

'अमृतार्णव', 69, अहिल्या नगर (एक्स.)
अन्नपूर्णा रोड, इन्दौर

डॉ. सुरेश उजाला की कविताएँ

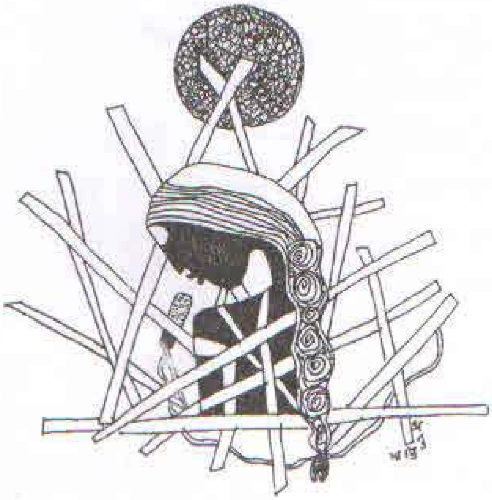

किताब

किताब
ठाहक है—सभ्यता की

अक्षय निधि है
जिन्हें
विनिष्ट नहीं
कर सकती
हमारी संतति

बिना किताब
मूर्ख है—साहित्य
पंगु है—विज्ञान
गतिहीन है—विचार

चुप होता है—इतिहास
बिना किताब के

पढ़ते समय
एकान्त का विश्राम है
किताब
सभी बाधाओं
सभी समस्याओं का
हल है—किताब

न्याय की फसल

तुम्हारे भीतर
लहलाहते उमड़ते
घुमड़ते
उत्तम विचारों को
देना चाहता हूँ
झूठ के खिलाफ
सच की जमीन

अदम्य ऊर्जा
जीवन पोषक तत्त्व
जल-प्राणवायु
और
समाज की उर्वरा शक्ति

ताकि
पैदा कर सको
अन्याय की धरती पर
न्याय की फसल।

108, तकरोही, पं. दीनदयाल पुरम्
मार्ग, इन्दिरा नगर, लखनऊ
(उ.प्र.)—226028
मो. 9451144480

नववर्ष की नव बेला में

बद्री लाल मेहरा 'दिव्य'

नव वर्ष की नव बेला में सबका मन हरषाएँ।
भारत माँ के वीर सपूतों, गीत-प्रीत के गाएँ।

जन-जन में विश्वास भरें,
जीतें सबके मन को।
सुन्दर भाव संजोए दिल में
शुचित करें हर तन को॥
कलुषित मन का त्याग करें सबको गले लगाएँ
नव वर्ष की नव बेला में, सबका मन हरषाएँ॥

भय ईर्ष्या और त्रासदी,
इनको भी हम भूलें।
नव वर्ष में नई सोच हों,
हम आसमाँ छू लें॥
यहाँ परिजन हैं हम सारे ऐसी सोच बनाएँ।
नव वर्ष की नव बेला में, सबका मन हरषाएँ॥

दर्द बाँट लें एक दूजे का
कायम करें भाईचारा।
सारे मृदुभाषी बन जाएँ,
लगे सभी को प्यारा॥
सद्भावों के बीज डालकर, दुर्गुण दूर भगाएँ।
नव वर्ष की नव बेला में, सबका मन हरषाएँ॥

अन्तर तम में दीप जलाएँ,
दिल रजत-सा चमके।
तमस युक्त निशा में जैसे
टिम-टिम तारे दमके॥
सत्य अहिंसा को अपनाकर स्वर्णिम भोर बनाएँ।
नव वर्ष की नव बेला में, सबका मन हरषाएँ॥

12 बी, लक्ष्मण विहार (प्रथम)
कुन्हाड़ी, कोटा-8 (राज.)
मो. 9829078518

डॉ. जयसिंह अलवरी की रचनाएँ

दोहा-मुक्तक

पलट गयी पल में हवा, निकले सब निर्दोष।
बन्द हुई बदनामियाँ, झूठे निकले रोष।।
फिर जलसे होंगे वही, गूँजेगा दरबार।
होगी-मंगल आरती, सुख देगा संतोष।।

दाता के दरबार में, होगा सच्चा न्याय।
देख रहे हैं सब सदा सारा ध्यान लगाय।।
करलो ऐसी नेकियाँ, मिले वहाँ सुख धाम।
दंड पाप का है बुरा, शास्त्र सब समझाया।।

छोटी-छोटी बात पे, चलते हैं अब तीर।
पल-पल रोता प्यार है, पर्वत सम है पीर।।
सपने सारे मिट गए, ढली-ढली है भोर।
जोर जुल्म सब बढ़ गए, धरे कहाँ तक धीर।।

झूठे सारे पा गए, फिर सारा सम्मान।
उभरी है चम्चागिरी, बनकर खूब महान।।
पल में सब चित हो गया, गूँज उठा दरबार।
हुई सफल पगचम्चियाँ, सच्चा निकला ध्यान।।

पग-पग पाप पनप गया, गायब है संस्कार।
नित्य नई अनहोनियाँ, थामें है तलवार।।
दिन वे सारे ढल गए, बुझी-बुझी है भोर।
स्वारथ की लपटे घनी, छीने है सब सार।।

धन की अन्धी दौड़ ने छीन लिया सुख चैन।
भूल गयी रस्ता हँसी, लिये नीर है नैन।।
रोयी-रोयी शाम है, ढली-ढली हर भोर।
घबराती है जान अब, देख नहाई रैन।।

धन के भूखे अब यहाँ बदले हैं नित भेष।
शर्म हया छू हो गयी, फैल रहा है द्वेष।।
रोज नई अनहोनियाँ, छीने है सुख चैन।
समय सुनहरा ढल गया, बचा नहीं कुछ शेष।।

आग लगी गर्मी

कितना और जलाएगी–
आग लगी यह गर्मी... ?

पानी दुम दबाकर भागा।
किरणों से सूरज ने दागा।
भुनसारे से गाँव शहर में,
ज्वालामुखी का मेला लागा।
कितना और लजाएगी–
लू की अब बेशर्मी... ?

झुलसे पेड़ों का जी घबराए।
पक्षी कहाँ अब कंठ भिगाएँ।
नख से शिख नदियाँ पपड़ाई
कुएँ प्याऊ पर प्यास बुझाएँ।
कितना और सताएगी–
जेठ दोपहर दुष्कर्मी... ?

दिन हवा के लगते रूठे।
गर्मी ने मार दई मूठें।
पानी के आश्वासन सारे;
साबित आज हुए हैं झूठे।
कितना और दिखाएगी–
गर्मी यह बेरहमी... ?

सम्पादक-साहित्य सरोवर
दिल्ली हाउस, सिरुगुप्पा-583121
जिला-बल्लारी (कर्नाटक)
मो. 09886536450

मेरे घर आई एक नन्ही परी

अनीता प्रभाकर

विदेश में रहती है मेरी बिटिया।
समाचार मिला कि उसके पैदा हुई है बिटिया।
सुन पुलकित हो नयन से अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी।
खुशी से मन में हिलोरें व तन में कम्पन्न होने लगी।
मन हुआ तुरन्त उड़कर बिटिया के पास पहुँच जाऊँ।
दौड़कर प्रभु की सर्वश्रेष्ठ कृति को गले से लगाऊँ।
कोमल कली को अंक में भर मन को ठण्डक पहुँचाऊँ।
बिटिया का माँ रूप देख वात्सल्य का झरना बहाऊँ।

सोचते सोचते मैं स्वयं अतीत में पहुँच गई–
जब मेरे घर पैदा हुई थी आज की माँ बनी वही बिटिया।
बगल में देखा, अँगूठा चूसती मुझे ताक रही थी बिटिया।
अपने तन से निर्मित एक तन देख कौतूहल से भर गई।
मेरे भी आँगन की बगिया में एक कलि खिल गई।
तुझसे क्या सम्मोहन था जो तेरी ओर खिंची आती थी।
कौन-सी डोर से बँधी तुझे अपनी बाँहों में भर लेती थी।
कभी तेरी शरारतों से मैं झींक-झींक जाती थी।
कभी तेरा भोला मुख देख तुझ पर वारी-वारी जाती थी।

बेटियाँ तो आखिर बेटियाँ ही होती हैं।
इनसे बढ़कर और कोई चीज नहीं होती है।
पिता का गौरव माँ का अभिमान होती हैं बेटियाँ।
पूरे परिवार की धड़कन औ' प्राण होती हैं बेटियाँ।।
प्राचीन काल में कठौती में डुबो दी जाती थीं बेटियाँ।
'जालली ललये पठाये' कह मार दी जाती थी बेटियाँ।।
विश्व में प्रभु ने रचे एक समान बेटे और बेटियाँ।
न जाने फिर क्यों अजन्मी रहती हैं बेटियाँ।।
कैसे निर्मोही लोग हैं जो कराते हैं गर्भपात।
बिटिया बोली, मारने से पहले सुनो मेरी बात–
''मैं बन कली तेरी बगिया महकाऊँगी।
ऊँचा पद पा तेरा नाम चमकाऊँगी।
भूखी प्यासी रहकर भी कोई माँग न करूँगी।
बेटों से अधिक तन-मन से तेरी सेवा करूँगी।।
मैं घर आँगन में उपाजाऊँगी सदा अपनापन।
चिड़िया-सी चहक मिटा दूँगी घर का सूनापन।।''

माँ बाप की आँखों का दर्द व खालीपन पहचानती हैं बेटियाँ।
न जाने कब माँ की छत्रछाया हो जाती हैं बेटियाँ।।
घर में लक्ष्मी रण में चण्डी ज्ञान में देवी हैं बेटियाँ।
कोमलता छोड़ जूडो कराटे में पारंगत हो जाती हैं बेटियाँ।
आदि-शक्ति की नौ देवियों का साकार रूप होती हैं बेटियाँ।
अपनी छठी इन्द्रिय द्वारा नराधमों को मात देती हैं बेटियाँ।।
दो कुलों के बीच अटूट सेतु बन जाती हैं बेटियाँ।
परहित जीवन समर्पित ममता का आगार हैं बेटियाँ।।
परिवार की आन-बान-शान व शृंगार होती हैं बेटियाँ।
काँटों पर चल दूसरों के पथ में फूल बोती हैं बेटियाँ।
धरती-सी सहनशील गगन-सी विशाल होती हैं बेटियाँ।
मस्तक का चन्दन तथा भावों का स्पन्दन हैं बेटियाँ।।
घर के तीज-त्यौहार में रौनक फैलाती हैं बेटियाँ।
धर्मग्रन्थ-सी पावन गंगाजल-सी निर्मल हैं बेटियाँ।।
समस्त सृष्टि की निर्माता प्रकृति का वरदान हैं बेटियाँ।
इन्हें सारी खुशियाँ दो क्योंकि दूसरे की धरोहर हैं बेटियाँ।।

सोचते-सोचते मन में विचार उमड़ आया विदेश जाने को।
तभी पतिदेव का फोन आया तैयार हो जाओ दो माह बाद जाने को।।
मेरी खुशी का ठिकाना न रहा यह सुनकर।
बस, मैं शीघ्र ही पहुँच जाऊँ विदेश उड़कर।।
मैं मन ही मन गुनगुना उठी–
मेरे घर आई एक नन्ही परी,
खिली मुस्कान मुख पे रस से भरी। मेरे घर...
है ये परिवार की खुशियों की धुरी,
माँ-पिता के भव-सागर की तरी। मेरे घर...

सम्पर्क– क्यू 43, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

साहसी बालक : राजू

जे.बी. शर्मा

प्राचीन समय में वाराणसी के आस-पास धौलपुर नामक एक गाँव था। उस गाँव में एक छोटा-सा परिवार था। उसी परिवार में राजू नामक पाँच वर्ष का एक नन्हा-सा बालक रहता था। बचपन में ही राजू की माँ भगवान को प्यारी हो गई थी। घर में बस, राजू व उसके पिता दोनों ही रहते थे। परन्तु पिता की अकर्मण्यता के कारण राजू की स्थिति बड़ी दयनीय थी। इसीलिए कभी कभार राजू को बिना खाए, खाली पेट ही सोना पड़ता था। पिता को भी अपनी अकर्मण्यता पर गुस्सा आता था। परन्तु उसका मानना था कि कभी तो हमारे दिन भी अच्छे होंगे वह मन ही मन सोचता था कि मैं अपने बच्चे को पढ़ा-लिखा कर बड़ा बनाऊँगा। फिर एक अच्छी-सी नौकरी मिल गई तो हमारे दिन लौट आएँगे।

एक दिन राजू के पिता ने कहा– बेटे, आज मैं काम की तलाश में जा रहा हूँ। घर में थोड़े से भीगे चने हैं, उसे तुम खाकर स्कूल चले जाना। मैं शाम को जल्दी ही लौट आऊँगा। राजू ने हामी में सिर हिला दिया। पिता के काम पर जाने के बाद राजू चने खाकर स्कूल चला गया। परन्तु वहाँ उसका मन नहीं लगा। मन में तरह-तरह की बातें सोचता रहा। माँ की मृत्यु से वैसे ही वह खोया-खोया रहता था, इधर भूख व गरीबी से लाचार उसे अपने पिता के निठल्लेपन पर गुस्सा भी आता था। शाम को जब वह स्कूल से घर लौटा तो देखा उसके पिता पहले से ही घर पहुँचे हुए हैं। राजू खीर खाते समय यह सोचने लगा कि– 'पिता जी रोज बाहर जाते हैं, परन्तु आज इतनी बढ़िया खीर लाए हैं, लगता है इसी तरह रोज खा लेते होंगे और मेरे लिए नहीं लाते हैं। अब मैं भी कल से इन्हीं के साथ जाऊँगा। कम से कम इनके साथ रहने से भरपेट खाने को खीर तो मिलेगी।'

फिर क्या था? राजू के पिता दूसरे दिन जैसे ही काम की तलाश में जाने को तैयार हुए कि राजू बोला–पिता जी! आज मैं भी आप के साथ ही चलूँगा। पिता ने कहा-- देखो बेटा तुम मेरे साथ कैसे जा सकोगे, तुम्हें तो स्कूल जाना है, और मैं काम के लिए कहाँ-कहाँ मारा-मारा फिरुँगा। फिर मेरा काम कोई निश्चित तो है नहीं। इसलिए बेटे तुम स्कूल जाओ। मेरे साथ चलने से कोई फायदा नहीं है। राजू ने पुनः कहा–नहीं पिताजी! मुझे भी आप के साथ ही चलना है। पिता के समझाने पर राजू जब नहीं माना तो उसके पिता हार कर उसे साथ ले जाने को राजी हुए।

आज वे काम की तलाश में गाँव से काफी दूर निकल आए थे। काम ढूँढ़ते-ढूढ़ते सुबह से दोपहर हो गयी। इधर भूख के मारे पिता-पुत्र चलते-चलते थक चुके थे। परन्तु वे आगे बढ़ते गए। कुछ दूर और जाने के बाद एक जंगल दिखाई दिया पिता-पुत्र एक पगडंडी को पकड़कर उस जंगल में दाखिल हुए। थोड़ी ही दूर जाने पर उन्हें एक आलीशान मकान दिखाई दिया। पास जाकर राजू के पिता ने आवाज लगाई–अरे कोई है? ...कोई है। परन्तु कोई उत्तर न पाकर वे दोनों घर के एक कमरे में दाखिल हुए। दरवाजा खुला ही था। अन्दर जाते ही राजू व उसके पिता की आँखें चमक उठीं। सामने खीर से भरा एक बहुत बड़ा पात्र दिखाई दिया। पिता-पुत्र से रहा न गया। दोनों भूखे शेर की तरह खीर पर टूट पड़े।

अभी आधा पेट खीर भी नहीं खा पाए थे कि अचानक एक जोरदार हलचल हुई। ऐसा लगा मानो आंधी आ गई हो। राजू के पिता ने मुड़कर देखा तो उनकी आँखें आश्चर्य और भय से फटी रह गई। थोड़ी ही दूरी पर एक विकराल मानव अट्टहास करते हुए उसी घर की ओर बढ़ा आ रहा था। देखते ही पिता-पुत्र के तो जैसे होश ही उड़ गए। फिर अपने को सम्हालते हुए पिता ने पुत्र की कलाई पकड़ कर उसी घर के कोने में बने 'कोठार' के अन्दर घुस गए। पलक झपकते ही वह विकराल आकृति घर के अन्दर प्रवेश कर ली। अब राजू के पिता को समझते देर न लगी कि यह कौन है? वास्तव में यह एक विशालकाय दानव था–और यह विशाल घर उसी दानव का निवास स्थान था।

अन्दर पहुँच कर दानव ने उस कमरे में एक बार अपनी नजर दौड़ाई। फिर खीर से भरे उस पात्र को दोनों हाथों से उठाकर गटकने लगा। उधर अनाज के 'कोठार' में बैठे पिता-पुत्र इस अजीबो गरीब दृश्य को देख रहे थे। कारण कि कोठार के बीच अनाज निकालने का एक गोल-सा सुराग था। राजू से रहा न गया। उसने अपने पिता से कहा– 'पिता जी! भूख लगी है, यदि आप कहें तो मैं दानव से खीर माँगू।' पिता ने कहा–'नहीं बेटे! यह दानव है, देखते ही हम दोनों को मार डालेगा।' राजू बोला– 'पिता जी! आप बहुत डरपोक हैं, मैं तो माँग कर ही रहूँगा। जरूर माँगूगा।' राजू की दृढ़ता देख उसके पिता ने कहा– 'ठीक है, जैसी तुम्हारी मर्जी। परन्तु याद रखो, यह आदमी नहीं दानव है–दानव! इसी मुसीबत के चलते मैं तुम्हें साथ नहीं ला रहा था।' कुछ नहीं होगा पिताजी! राजू बोला। इसके बाद वह अपनी एक हथेली को माँगते देख दानव घबरा गया। खीर का बर्तन उसके हाथ से छूटकर अचानक नीचे गिर पड़ा। उठकर अपनी धोती सम्हाले तेजी से भाग खड़ा हुआ। दानव के बाहर

जाते ही बाप-बेटे बाहर निकल जी भर खीर उड़ाने लगे।

इधर दानव बेतहाश भगा जा रहा था। तब उसकी दशा देखने ही लायक थी। रास्ते में एक गीदड़ ने रोककर उससे पूछा— क्यों दानव जी! क्या बात है? जो इस तरह भागे जा रहे हो? कहो खैर तो है? दानव बोला— गीदड़ भाई! मैं एक बड़ी मुसीबत में फँस गया हूँ। हाँफते-हाँफते वह बोला— बात असल में यह है कि मेरे घर में एक 'मगुँआ' घुस आया है। गीदड़ बोला— यह मँगुआ क्या होता है? तनिक हमें साफ-साफ बताओ तो। दानव ने कहा— वैसे मैं भी ठीक तरह से नहीं जानता, परन्तु एक हाथ की हथेली है, जो मुझसे खीर खते समय मुझसे खीर माँग रही थी, कि मुझे भी खीर दो। ऐसा विचित्र प्राणी तो मैंने कभी देखा ही नहीं। लोग मुझे देखकर काँप जाते हैं, डर के मारे घिग्गी बँध जाती है पर उसे देखने के बाद मेरे होश ही उड़ गए हैं

गीदड़ उसे समझाते हुए बोला— तुम चिन्ता मत करो तुम मेरे साथ घर चलो। मैं उसे तुम्हारे घर से निकाल कर बाहर न किया तो मेरा नाम गीदड़ दादा नहीं। फिर क्या था? आगे-आगे दानव और उसके पीछे गीदड़। दानव के घर पहुँचने पर गीदड़ बोला— तुमने उस मँगुवे को कहाँ देखा था? दानव उसे 'कोठार' की ओर संकेत कर के बता दिया। उधर राजू व उसके पिता उसी कोठार में फिर से छिपकर बैठे रहे। गीदड़ पास पहुँचकर बने उस छिद्र से अन्दर देखने का प्रयत्न करने लगा, परन्तु अँधेरे के कारण उसे कुछ भी दिखाई नहीं दिया। हार कर वह अपनी दुम (पूँछ) उसके अन्दर घुसेड़ दिया और उसे हिला-हिलाकर परखने लगा कि अन्दर कोई है भी या नहीं।

गीदड़ की पूँछ को अन्दर पाकर बालक राजू की बाँछें खिल गई। धीरे से अपने पिता के कान में बोला— 'पिताजी! यदि आप कहें तो मैं इसकी पूँछ पकड़ कर खीचूँ।' पिता ने कहा— 'नहीं बेटे! ऐसी गलती मत करना। ये दो हैं, एक-एक करके हमें मार डालेंगे। बुद्धिमानी इसी में है कि चुपचाप बैठे रहो।' राजू बोला— 'पिताजी! आप सचमुच डरपोक हैं। आप डरें, परन्तु मैं तो इसकी पूँछ अवश्य पकड़ूँगा।' पिता ने कहा— ठीक है, हम दोनों साथ ही पकड़ते हैं।

पिता पुत्र दोनों ने मिलकर गीदड़ की पूँछ पकड़ ली। गीदड़ छुड़ाने का प्रयत्न करने लगा। जब असफल हुआ तो बोला— दानव भाई, मेरी पूँछ तो अन्दर फँस गई है। मुझे पकड़ कर खींचो। दानव गीदड़ को पकड़कर जोर लगाया, दोनों तरफ से खींचा तानी शुरू हुई। इसी खींचातानी में गीदड़ की पूँछ भस्स! करके उखड़ गई। खून की धारा बह चली। दानव के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगी। गीदड़ किसी तरह अपने को सम्भाल कर लुढ़कते-पुढ़कते दानव के पीछे भागने लगा।

अन्धेरा धीरे-धीरे बढ़ने लगा। 'कोठार' के ऊपर थोड़ी सी ऊँचाई पर एक मोटी-सी शहतीर रखी हुई थी। राजू व उसके पिता दोनों उसी पर जा बैठे। उधर गीदड की कराह सुनकर मार्ग में एक शेर मिला, शेर ने पूछा— 'क्यों रे सियार! क्या बात है? किसी से पंगा ले लिया था क्या।' सियार (गीदड़) बोला— 'नहीं बनराज। दानव भाई के घर में एक पूँछ उखाड़ बैठा है, उसने मेरी पूँछ उखाड़ ली है।' दानव ने कहा— 'नहीं शेर भाई मेरे घर में मगुँआ घुस आया है।' गीदड़ ने कहा— 'नहीं, वह पूँछ उखाड़ है।' दानव— 'बिल्कुल नहीं, वह तो मगुँआ है।' दोनों की बातें सुनकर शेर ने कहा— 'ठीक है, चलो मैं दोनों को ही घर से निकाल कर उन्हें मार डालता हूँ। आखिर मैं जंगल का राजा हूँ। मुझे किसी से डर नहीं है, चलो मेरे साथ।'

अब तीनों पुनः उसी स्थान पर आ पहुँचे। दानव के बताने पर शेर एक ही छलाँग में 'कोठार' के ऊपर जा पहुँचा और उसका ढक्कन हटाकर उसी में कूद पड़ा। अब उसने नीचे के दो पैरों से निरीक्षण करने लगा। इस दृश्य को देखकर राजू अपने पिता के कान में फुसफुसाया— 'पिता जी! यदि आप कहें तो मैं इसकी कमर पर कूदूँ।' पिता भयभीत होकर बोला— 'नहीं पुत्र! यह शेर है, इससे पंगा लेने का मतलब मौत को दावत देना है। चुप कर यहीं बैठे रहो। नहीं तो वे हमारी बोटियाँ नोच डालेगा।'

राजू बोला—'पिताजी, आप वाकई डरूराम हैं। आप डरिए, मैं मानने वाला नहीं। मैं अब इसके ऊपर कूद कर ही दम लूँगा।' फिर क्या था? राजू और उसके पिता दोनों मिलकर शेर की कमर पर निशाना साधकर कूद पड़े। चटाक की आवाज के साथ एक जोरदार दहाड़ मारकर शेर उछला और नीचे आ गिरा। शेर की यह दशा देख दानव व गीदड दोनों भाग खड़े हुए। फिर किसी तरह अपने को सम्हाल कर वह शेर गिरते पड़ते उन्हीं के पीछे हो लिया। तीनों ही बुरी तरह डरे और सहमे थे। दानव बोला— ऐसा जबरदस्त मगुँआ मैंने कभी नहीं देखा था। गीदड़ ने कहा— 'अब बस भी करो— वह मगुँआ नहीं, पूँछ उखाड़ है।' फिर शेर दर्द से कराहते हुए बोला— 'तुम दोनों ही झूठ बोल रहे हो। उसने मेरी कमर तोड़ दी है, इसलिए उसका नाम तो कमरतोड़ है।'

इसके बाद उस घर में दानव कभी नहीं लौटा। फिर क्या था। अब राजू और उसके पिता दोनों आराम के साथ उस घर में रहने लगे। अब वे दानव के घर में पड़े सोने, चाँदी, हीरे, जवाहरात आदि सारी सम्पदाओं के स्वामी थे। दूसरे दिन राजू जब अपने विद्यालय पहुँचा तो उसने अपने सहपाठियों को सारी बात सच-सच बता दी। उसके सहपाठी यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और सभी उसके साहस व चतुराई की प्रशंसा करने लगे।

प्रबन्धक हिन्दी साहित्य कला परिषद, पोर्ट ब्लेयर
मो.- 9679517176

चतुराई का न्याय

(लोककथा पर आधारित)

रजनीकान्त शुक्ल

वंदना : जय हो बुद्धिदायिनी देवी, सुमरूँ तुमको बारम्बार,
संकट में नइया डोले, तब तुम्हीं लगाती बेड़ा पार,
बालक बूढ़े जवां मर्द वो नर हो अथवा हों नारी,
दृष्टि कृपा की पड़े बुद्धि कीखिल जाती फुलवारी,
हाथ जोड़ माँगें, हम सबके बुद्धि का भंड़ार भरो,
काम बनें सब ही के सारे, सबका ही कल्याण करो,
बिना बुद्धि के दाल न गलती, मारे-मारे घूम रहे,
बुद्धि मिली तो परसू भइया, परसराम बन झूम रहे,
अब दे दो आशीष हमें माँ, हम बालक नन्हें भोले,
सच्चे मन से करें वंदना, द्वार दया के अब खोलें,
जय हो बुद्धिदायिनी देवी, सुमरूँ तुमको बारम्बार,
संकट में नइया डोले, तब तुम्हीं लगाती बेड़ापार,

(मंच के दोनों तरफ से एक एक वाचक एक साथ गाते हुए प्रवेश करते हैं।)

दो वाचक : (लावनी)
आज सुनते हैं एक कहानी,
जिसे कहती थी मेरी नानी,
बुद्धि का खेल निराला है,
तमाशा होने वाला है,

एक वाचक : होती सब में बुद्धि, अकल कहते जिसको,
दूसरा वाचक : हटकर सोचो जरा, अलग सा दीखो सबको,
एक वाचक : बुद्धि अगर पैनी कर पायी, तो कुछ पाएगा,
दूसरा वाचक : सिक्का तेरा जादू जैसा, फिर चल जाएगा,
एक वाचक : बात वही, पर अगर ध्यान जो दे पाएँ,
दूसरा वाचक : सूक्ष्म दृष्टि कर सोचें, मंथन कर पाएँ,
एक वाचक : हर सवाल अपना जबाब लेकर आता,
दूसरा वाचक : हमें देखना है उनमें क्या है नाता,
एक वाचक : कुछ ऐसी ही बात आज दिखलाएँगे,
दूसरा वाचक : जिसे देखकर अकलमंद चकराएँगे,
एक वाचक : आओ देखो खेल यहाँ चतुराई का,
दूसरा वाचक : हुआ किस तरह से बँटवारा भाई का,

एक वाचक : जो आए आप इस महफिल में,
अपनी जाँ में जान आई,
दूसरा वाचक : गुलों पे आ गई रौनक, गुलिस्तां में बहार आई,
एक वाचक : अगर शब्दों की डंडी, दिल की घंटी को बजा जाए,
दूसरा वाचक : तभी ताली बजाना तुम, कि जब, तुमको मज़ा आए,

(वाचक जाते हैं। मंच पर अँधेरा होता है। फिर प्रकाश, एक घर का दृश्य, एक बूढ़ा बीमार व्यक्ति लेटा है। उसके आस पास उसके चार पुत्र उपस्थित हैं।)

बूढ़ा : मेरे बच्चो, अब मैं बुड्ढा हो गया हूँ। पता नहीं डाल से पके हुए फल की तरह कब टपक जाऊँ...

(दोहा)

मैं बूढ़ा अब हो गया जैसे पक्का फल,
छूट जाऊँगा डाल से आज नहीं तो कल,
लेकिन मेरे प्यारे बच्चो, मुझे एक चिंता सता रही है।

(दोहा)

मेहनत से धन जोड़कर रक्खा जिसे सँभाल,
मर जाऊँ तो लड़ मरो, कहीं न मेरे लाल,

(लावनी)

चाहता बाँटू एक समान,
हँसे ना तुम पर कहीं जहान,
यही था तुमको समझाना,
मिलके रहना, तुम लड़ना ना,

छोटा बेटा : (लावनी)
पिताजी, आपकी बात सयानी है,
मगर मुझको हैरानी है,
दुआ है कभी न आप मरें,
इसलिए हिस्से पाँच करें,

बड़ा बेटा : (लावनी)
पाँचवा भी तो कभी बँटे,

मँझला बेटा : न झगड़ें, कैसे वहाँ बचें,

बूढ़ा : (दोहा)
उसकी चिंता मत करो, मेरा निर्णय जान,
लेगा वो जो होएगा, सबसे चतुर सुजान,

(बूढ़ा लेटे से आधा उठता है। सभी बच्चे प्रणाम करते हैं। बूंढ़ा आशीर्वाद देता है। अँधेरा होता है। फिर प्रकाश, दोनों वाचक आते हैं।)

एक वाचक : धीरे-धीरे समय गुजरता,
ऐसा भी दिन आया यार,

दूसरा वाचक : मृत्यु लोक में मर, जा पहुँचा,
जो था बूढ़ा और बीमार,

एक वाचक : उनका वाला हिस्सा आखिर,
किसके खाते चढ़ना था,

दूसरा वाचक : कौन 'चतुर' का करे फैसला,
ये उनको तय करना था,

एक वाचक : मिलकर सबने किया फैसला,
राजा के दरबार चलो,

दूसरा वाचक : जो भी निर्णय वो दे देंगे,
सारे मिल उसको मानो,

एक वाचक : (लावनी) नहीं आपस में की तकरार,

दूसरा वाचक : चल दिए राजा के दरबार

एक वाचक : नहीं था समय आज का यार,

दूसरा वाचक : रास्ता लम्बा कष्ट अपार,

(मंच पर अँधेरा, वाचकों का प्रस्थान, प्रकाश, चारों भाई राजा के दरबार के लिए जाते हुए दिखाई देते हैं।)

भाई एक : पार हो कैसे लम्बी राह, रहे हम सब में बना उछाह,
चलो कुछ युक्ति भिड़ाते हैं, सभी अनुमान लगाते हैं.
सुनो दे ध्यान, ओ मेरे भाई, एक औरत आगे से गई,
(कुछ आगे बढ़ते हुए)

दूसरा भाई : चाल उसकी डगमगा रही, वो जो औरत आगे जा रही,

(तभी उनके पीछे से आने वाला एक राहगीर व्यक्ति आगे बढ़कर आता है। इसकी बातों को ध्यान से सुनता है।)

तीसरा भाई : बात कहता हूँ थोड़ी जुदा, वो तो महिला है शादीशुदा,

(पीछे वाला व्यक्ति चौंक कर एक कदम आगे आता है।)

चौथा भाई : वो न लडकी है न कोई सती, वो तो महिला है गर्भवती,

(पीछे वाला राहगीर चौंक कर आगे आता है और गुस्से में कहता है)

राहगीर : (*बहरे तवील*)
जिसका करते बयां वो है औरत मेरी,
वो कहाँ है कहाँ है ये जल्दी बता?,
जो छुपाया है तुमने दो जल्दी बता,
उस जगह का मुझे दे दो जल्दी पता?,
घर से नाराज़ होकर के भागी है वो,
होने वाला है जल्दी ही बच्चा उसे,
पैर में चोट उसको लगी है बड़ी,
दो पता है कहाँ, वो छिपाया जिसे?

एक भाई : पता नहीं हम सबको भइया, औरत कहाँ तुम्हारी,
हम तो खुद अपनी उलझन में, फँसे हुए हैं भारी,
हमने देखा नहीं, आप खुद उसको, ढूंढें जाकर,
हम तो यूँ ही सोच रहे सारे, अनुमान लगाकर,

राहगीर : भाई, कैसे ऐसा हो सकता, सब सच बतलाया तुमने,
करूँ शिकायत राजा से, जो न पता बताया तुमने,

पहला भाई : (लावनी)
चलो राजा के पास चलो, चलो हम सभी वहीं जा रहे,
फैसला यह भी हो जाए, समस्या हम भी ले जा रहे,

दूसरा भाई : (सवैया)
सुनो भाई, भाई हैं चार भले घर के हम,
चोर नहीं जो लुगाई लै भागे,
पीछे थे आप हमारे, भला कब देखे हमें हम थे तेरे आगे,
राजा के राज में वास करैं, हम रैयत लोग प्रजाजन सारे,
अच्छी करी अब साथ चलो, झट होयगा फैसला भाग हैं जागे,

राहगीर : (दोहा) चल राजा के पास जा, पाएँगे इंसाफ,
पता चलेगा जा वहीं, सजा मिले या मुआफ,

(अब पाँचों राजा के दरबार के लिए चल देते हैं। रास्ता लंबा था, इसी बीच कुछ आगे बढ़ते ही एक और राहगीर उनके पीछे-पीछे चलने लगता है। तभी अचानक पहला भाई बोल पड़ता है।)

पहला भाई : भाइयो हमको यो लागे, हमारे ऊँट गयो आगे,

दूसरा भाई : भाई तू बड़ा सयाना है, मगर वो ऊँट तो काना है,

तीसरा भाई : ऊँट तो वैसे भी है धन, माल पर उस पे है नौ मन,

चौथा भाई : बात तुमने मुँह की छीनी, माल क्या है वो है चीनी,

नया राहगीर : ऊँट जिसकी करो बात मेरा है वो,
माल नौ मन है चीनी का जिसपे लदा,
है छुपाया कहाँ जल्द कह दो मुझे,
या बता दो मुझे जल्द उसका पता ?,
है वो काना हकीकत में सच ही कहा,
तुमने देखा है इसमें कसर ही नहीं,
दो बता जल्द हमको, छुपाया कहाँ,
ढूँढ़ता कल से अबतक ख़बर ही नहीं ?,

पहला भाई : (लावनी)
अरे ये क्या यार आफत है
ऊँट हमने कब है देखा, भइया जी तुम्हें हुआ धोखा,
बस अपने मन को भाया था, सिर्फ अनुमान लगाया था,

ऊँटवाला : (दोहा)
मैं ना मानूँ बात को, बोल रहे तुम झूट,
सच्ची-सच्ची बता दो, कहाँ छिपाया ऊँट,
नहीं अगर तो तुम चलो, सारे भाई चार,
वहीं फैसला होगा, राजा के दरबार,

दूसरा भाई : चलो चलते हैं, हम भी वहाँ,
राज दरबार लग रहा जहाँ,
उलझनें पहले की भी हैं,
एक इसको भी संग ले लें,

(सारे छह लोग चलते-चलते मंच के बाहर निकल जाते हैं। मंच पर अँधेरा फिर प्रकाश, राजा का दरबार)

वाचक एक :(*पार्श्व से आकर*) राजा के दरबार में पहुँच गए सब आय,

वाचक दो : राहगीर ने दुखी हो हाल दियो बतलाय,

वाचक एक :औरत मेरी सबों ने, मिलकर दई छिपाय,

वाचक दो : राजा साहब रहम कर देव मोय दिलवाय,

पहला भाई : कटे रास्ता, इसलिए, लगा रहे अंदाज़,
जो दीखा वो ही कहा, हमने तो महाराज,
औरत की चप्पल वहाँ, पड़ीं राह में देख,
हमने तो यूँ ही कहा, गई है महिला एक,

दूसरा भाई : निशां दिख रहे डग मग, ऊँचे नीचे जात,
हमने भी यूँ ही कहा, औरत वह लंगड़ात,

तीसरा भाई : जहाँ उसने था सुस्ताया, पैर के बिछिए को पाया,
पहनतीं जिसको शादीशुदा, बात हमने यूँ की थी जुदा,

चौथा भाई : हाथ लगा पीछे उठी, दीखा बना निशान,
समझ गए आने को है, कोई नया मेहमान,
यही था हमने फरमाया, कहो ना ये सच है भाया,
गलत हो अगर तो कहो हुजूर,
जो मिले सजा, हमें मंजूर,

राहगीर : यही थी बात सही महाराज, नहीं है इसमें कोई राज़,
सत्य जो था बस वो ही कहा, न इसमें बाकी कुछ भी रहा,

राजा : (*भाइयों से*) बहुत चतुर तुम लोग हो, क्या सच्चे अनुमान,
सहज दिख रहे हो मगर, हो पूरे विद्वान,
(*राहगीर से*)
अपनी औरत को कहीं, और ढूँढ लो जाकर,
सीधे सच्चे सरल इन्होंने, रक्खा नहीं छिपाकर,

(राहगीर प्रणाम करके दरबार से निकल जाता है। अब ऊँट वाला बढ़कर आगे आता है।)

ऊँटवाला : क्षमा करें महाराज, अरज सुन भी लें जरा हमारी,
खोया ऊँट दिलादें मेरा, दया करें ये भारी,
मेरा काना ऊँट माल जिस पर, नौ मन था लादा,
बेच करूँ रुजगार, कर्ज ले, ऐसा किया इरादा,
लेकिन महाराज,
ऊँट ऐसा हुआ मेरा गायब यहाँ,
आँख से जैसे काजल चुराया गया,
अपने कानों से मैंने, सुना है यही,
इन सभी भाइयों से है, बताया गया,
अब यही आपसे है गुजारिश मेरी,
ऊँट कैसे भी मुझको दिला दीजिए,
उम्र भर आपके मैं तो गुन गाऊँगा,
आप इन चोरों को ऐसी सज़ा दीजिए,

राजा : मुझको लगता नहीं है, कि ये चोर हैं,
बात इनकी भी इनसे तो सुन लें जरा,
फैसला सुन के सारा करेंगे तभी,
झूठ और सच को मन में तो गुन लें जरा,
हाँ तो अब तुम बता दो सभी भाइयो,
क्या है किस्सा ये चोरी का खुल कर कहो,
तय ये होगा अभी दो में एक बात तो,

कैद में तुम रहो या महल में रहो,

पहला भाई : सुने महाराज, हम सभी भाई,
जनम से हमने आदत पाई,
बात में गहरे जाते हैं,
और अनुमान लगाते हैं,

दूसरा भाई : कैसी भी हो बात, ध्यान हम पूरा उस पर देते,
है स्वभाव पाया ऐसा, नज़रें पैनी कर लेते,

तीसरा भाई : यही तो हम सबका कमाल,
ले के आते खूबियाँ निकाल,
हल तो होता ही है सबका,
चाहे वो हो कोई सवाल,

चौथा भाई : महाराज,
जो भी चाहे उसे, कर सकें सहज ही,
बस जरा देखने की नज़र चाहिए,
सब बनें आपके, सबके हो जाओ तुम,
बस नज़र में जरा सा असर चाहिए,

पहला भाई : अपने बचपन से हम सब पशू देखते,
उनके पाँवों का हमने निशां पढ़ लिया,
अब बताता हूँ किस्सा है क्या ऊँट का,
जो भी देखा नज़र से, उसे कह दिया,

दूसरा भाई : अब सुनें सब हमारी भी बातें सुने,
झाड़ियाँ दोनों जानिब लगी थीं हरीं,
पर वो एक ओर से ही थी खाई गइं,
समझा मैं, ऊँट की, एकनज़र ही नहीं,

दरबारी व राजा : वाह वाह क्या नज़र है...

तीसरा भाई : एक जवां ऊँट से जितना गड्ढा बने,
ये मुझे इल्म है, मैंने देखा है ये,
एक मन वज़न से कितना अंदर धंसे,
नापकर इसको नौ मन बताया उसे,

चौथा भाई : काम मेरा तो बिलकुल ही आसान था,
चीटियों को इकट्ठे हुए देखकर,
पास जाकर जो चीनी को पाया वहाँ,
पल में चीनी कहा, फिर न रखी कसर,

राजा : वाह क्या बात, कैसे नजूमी हो तुम,
दूध को दूध, पानी को पानी किया,
बात आई समझ यहाँ, एक-एक के,
बुद्धि को सबकी पैनी, सयानी किया,
ऊँट वाले कहीं और जा ढूँढ ले,
ये नहीं चोर हैं, ये पता चल गया,
जो भी देखें कभी कुछ, हो पैनी नज़र,
इस मुकदमे से हमको, सबक मिल गया,

(ऊँट वाला हाथ जोड़ता हुआ दरबार से बाहर चला जाता है।)

महामंत्री : सारे के सारे चतुर, भाई एक से एक,
कौन जियादा कम भला कौन सके ये देख?

पहला भाई : महाराज, पहले सुन लें फिर करें फरमान जारी,
असल में यही तो है, समस्या हमारी,

चारो भाई : (*एक साथ*) राजा साहिब मुकदमा हमारा,
फैसला जिसमें होगा तुम्हारा,
कौन हममें चतुर ये बताओ,
कष्ट हम सबका है जो मिटाओ,
है नज़र पर नहीं है नज़ारा,
हम पे अहसान होगा तुम्हारा,
खुश हो मन में, यहाँ से जो जाएँ,
मिलके हम सारे, गुन गुनगुनाएँ,
कितने दिन से लदा बोझ सारा,
राजा साहब मुकदमा हमारा,

राजा : (*दूसरी ओर मुँह करके अपने आप से*)
सब के सब हैं चतुर, कैसे हो ये गुजर,
मैं ना जाना,
फैसला करेगा कोई सयाना,
फैसला ये करेगा सयाना,

राजा : मंत्रीजी सुनिए जरा, करिए इनका न्याय,
कौन चतुर सबसे बड़ा, जल्दी दें बतलाय,

मंत्री : चुटकी में हो फैसला, कौन बड़ी ये बात,
पल भर में मिल जाएगा इन सबको इंसाफ
कुछ सवाल मैं करूँगा, दें दें जरा जबाब,
सबसे ज्यादा चतुर मैं, समझूँ उसे जनाब,

चौथा भाई : करेंगे हम कोशिश सारे,
आजतक नहीं कभी हारे,
मान मिट्टी का रक्खेंगे,
विजय के स्वाद को चक्खेंगे,

मंत्री : (*अच्छा इतना आत्म विश्वास तो बोलो*)
क्या जाए आती नहीं,
क्या आए ना जाए?
भेद कौन सा छिपा है,
बड़का मुझे बताए?

पहला भाई : (*सोचता हुआ आगे आता है।*)
जा के आती नहीं है, जवानी है वो,

आ के जाता बुढ़ापा, नहीं है, सुनो,
इसलिए सोचो समझो करो गौर सब,
और फिर जो सही हो, उसी को चुनो,

मंत्री : महाराज, क्या कमाल का हिसाब आया है,
बहुत खूब कैसा सुंदर जबाब आया है,
अब बताएँ जरा, दूसरे भाई जी,
क्या वो सबसे बड़ा सच, बदलता नहीं?
कोई धन, बल, अकल काम आती नहीं,
जोर उस पर किसी का भी, चलता नहीं,

दूसरा भाई : जन्म जिसका हुआ वो मरे ही मरे,
ये है दुनिया का सबसे बड़ा सच, सुनो,
ये न बदले, बदल जाए सारा जहाँ,
इसलिए राह जो हो सही, वो चुनो,

मंत्री : वाह क्या बात है, तुम सभी हो गुनी,
पर बताओ मुझे तीसरे भाई जी,
मौत से भी हो दुष्कर वो क्या दंड है?
कहते हैं क्या उसे, कुछ समझ आई जी?

तीसरा भाई : जब करें हम कोई पाप, खुद बोध हो,
उसकी चिंता चिता सी जलाती हमें,
खुद ही चाटे, हमें बोध अपराध का,
और पल-पल यही बात खाती हमें,

मंत्री : कौन हमारा सच्चा साथी तुम हमको बतलाओ,
दिया जबाब सही तो फिर तुम शाब्बासी पा जाओ,

चौथा भाई : कैसी भी हो घड़ी, हो मुसीबत पड़ी, तुम न रोना,
ग़म बिखर जायेगा, रंग निखर आयेगा, जैसे सोना,
दोस्त सबसे बड़ा, साथ में है खड़ा, है वो जो ना,
धैर्य साथी हमारा हमेशा कहे हाथ दो ना,

मंत्री : ऐसे तो दे ही दिए सबने सही जबाब,
समझे थे, हो जाएगा इसका तुरत हिसाब,
कोई और उपाय सोचकर हल कर देंगे किस्सा,
जो जिस लायक होगा उसको मिल जाएगा हिस्सा,

चौथा भाई : जब तलक हल हो किस्सा सुने सब यहाँ,
एक उत्तर हमें, बन पड़े दीजिए,
गर सही हो गया तो बहुत ठीक है,
उसके बदले हमारी दुआ लीजिए,
वो है क्या जिसका आना है अच्छा नहीं,
गर चली जाए तो भी बुरा है बहुत,
फैसला आपके मन में आए तो हो,
सोचो सोचो बताओ बताओ ये खुद?

(सब चकराकर इधर उधर देखते हैं किसी को जबाब नहीं सूझता)

चौथा भाई : जाते जाते कह रहा- उत्तर सुने जनाब,
आना और जाना बुरा दोनों, 'वो है आँख',

(तभी पार्श्व में दरबार का समय समाप्त होने की आवाज आती है।)

राजा : सुनो, भाई सभी चारों, हमारे मन को भाए हो,
कि कितनी दूर से उम्मीद लेकर आप आए हो,
समय होता है पूरा आज का, दरबार कल होगा,
करूँगा फैसला चतुराई का, जो लौ लगाए हो,

(दरबार बर्खास्त, अँधेरा फिर प्रकाश, महल में सामने भोजन रखा हुआ पर राजा बेचैनी से टहलता हुआ, राजकुमारी का प्रवेश)

राजकुमारी : *(अरे, पिताजी, लगता है आपके मन में कोई परेशानी है।)*
क्या है चिंता बताओ, पिताजी मुझे,
छोड़ खाना, यूँ मन में परेशान हैं,
किसने डाला है उलझन में, यूँ आपको,
वो हैं अपने कोई या फिर, अनजान हैं,

राजा : मुझको रहने दो यूँ, तुमसे होगा नहीं,
बात गहरी है करना मुझे फैसला,
सोचता हूँ कि कल मुँह दिखाऊँगा क्या?
जो मुझे प्रश्न का अपने हल ना मिला,

राजकुमारी : आप चिंता न करना पिताजी जरा,
मैं हूँ काबिल, लगूँगी मैं जी जान से,
आपका मैं ये सिर, झुकने दूँ ना कभी,
रहो जब तक रहोगे, यूँ ही शान से,

राजा : फिर तो सुन मेरी बेटी, मुकदमा है एक,
सुबह तक हल है देना, परेशान हूँ,
चार भाई हैं एक से बड़े, एक चतुर,
उनमें सबसे चतुर से मैं अनजान हूँ,
तू बता पाए जो तो मैं निश्चिंत हो,
खाना खाकर के सोने का कर लूँ जतन,
क्या विधाता ने लिक्खा है तकदीर में,
अपना उत्थान होगा या होगा पतन,

राजकुमारी : आप निश्चिंत होकर के सो जाइए,
छोड़िए सारी उलझन मैं हूँ ना अभी,
ऐसा हल इस समस्या का बताऊँगी मैं,
रुसवा होने तो मैं, खुद को, दूँना कभी,

राजा : सुनो भरोसा कर रहा मन पक्का कर आज,
जा बेटी अब हाथ में तेरे मेरी लाज,

(मंच पर अंधेरा फिर प्रकाश, शाही मेहमानखाने में चारों भाई बैठे हुए, राजकुमारी छुप कर उनको देखती हुई, दूसरी ओर से राजा भी इन सब पर नज़र रखता है)

पहला भाई : भाइयो, आज राजा के मेहमां बने,
कैसी किस्मत है अपनी मज़ा आएगा,
शाम को खाएँ क्या, क्या मिलेगा हमें?
हो जो ख्वाहिश बता दो, वही आएगा,

(मैं तो अपने मन की इच्छा बताता हूँ)

मेरा मन तो दही खाने को, करता है मेरे भाई,
न जाने क्यों मेरे मन में ये इच्छा आज है आई,

दूसरा भाई : जो पूछो क्या खाऊँगा कहूँ ये सोचविचार,
चाहूँ खाना आज मैं, बकरे का शिकार,

तीसरा भाई : शुद्ध घी में बने हों, वो पुए खाऊँ मैं,
है इरादा मेरा, काश पूरा हो ये,
वरना जाऊँ मैं जाने, कब अपने घर,
सपना खाने का अपना अधूरा रहे,

(चौथे को चुप देख तीनों उससे इशारा करके पूछते हैं।)

छोटा भाई : मैं हूँ चुप इसलिए मेरी ख्वाहिश अलग,
मुझको खाने में कुछ भी मिले न मिले,
पर ये चाहूँ कि राजा की बेटी मिले,
उससे बातें करूँ, दिल मिले न मिले,

बड़ा भाई : गज़ब, क्या सोचता है तू,
भला होगा ये सब कैसे?
मगर जब सोचना ही है,
तो हो बंदिश भला कैसे?

(मंच पर अंधेरा, फिर प्रकाश राजकुमारी और सेवक)

राजकुमारी : सुनो सेवक जो इच्छा इनकी है पूरा उसे कर दो,
दही, बकरा, पुए जो माँगते हैं सामने धर दो,
मगर चौथे को मेरे पास आदर से लिवा लाओ,
न करना देर अब, सुन लो अभी, जाओ तुरत जाओ,

(सेवक बाहर जाता है। मंच पर अंधेरा फिर प्रकाश जिसमें चारो भाई बैठे दिखाई देते हैं। राजकुमारी उन्हें छुपकर देखती है।)

बड़ा भाई : मज़ा आ गया भाई मेरे, जो मनचाहा वो खाया,
हलवाई ने दही में पर, बकरी का दूध मिलाया,

दूसरा भाई : खाया तो शिकार बकरे का मैंने भी भाई,
मगर भेड़ की उसमें मैंने मिलावट पाई,

तीसरा भाई : पुए बने थे अच्छे, लेकिन शुद्ध नहीं था घी,
महुए वाला तेल मिला था उसमें भइया जी,

(चौथा चुप था। तीनों उससे उसका अनुभव जानना चाहते हैं)

छोटा भाई : अपनी क्या मैं बताऊँ, परेशान हूँ,
ये कहूँ ना कहूँ, मन में उलझन बड़ी,
बात करके तो अच्छा लगा था मुझे,
पर ये राजा की बेटी है, उसकी नहीं,

वाचक एक : *(पार्श्व से)*
सुन के राजा की बेटी को झटका लगा,
भेजकर नौकरों को लगाया पता,
जो कहा भाइयों ने वो सच था सभी,
दौड़कर पहुँची फिर उसने माँ से कहा,

वाचक दो : सच बता दे मेरा बाप है कौन सा,
मेरी ममता का अय माँ तुझे वास्ता,
वरना करना मुझे माफ मैया मेरी,
मैं महल छोड़ जंगल का लूँ रास्ता,

वाचक एक : माँ ये बोली-भला क्या ये सोचे है तू,
क्या मेरे प्यार में कुछ कमी पाई है,
क्यों भला तेरे मन में उठी बात ये,
तू जो गुस्से में दौड़ी चली आई है,

वाचक दो : चार भाई चतुर जो भी कहते, सही,
जो बताया है उसका मुझे भान है,
बस यही राज़ की बात बाकी रही,
मेरी माता बता दो तुम्हें ज्ञान है,

वाचक एक : सच है बेटी न मैंने कभी की कमी,
तू है बचपन से पालित हमारी रही,
राज़ है ये किसी को पता ही नहीं,
इसलिए तुझको हमने बताया नहीं,

राजकुमारी : यूँ तो सारे चतुर एक से इक बड़े,
कौन सबसे चतुर ये पता मिल गया,
एक चिंता मिटी परेशां पिता की,
कल को दरबार जाने का हल मिल गया,
फैसला वो करूँगी जो देखेंगे सब,
अब मैं राजा की बेटी हूँ दिखलाऊँगी,
कोई भी हो कहीं कल को वो क्या बने,
करके साबित यही सबको दिखलाऊँगी,
बात समझें अगर बुद्धि से सोचकर,
हर समस्या हमें ज्ञान देती सुनो,
बिन डरे अक्ल से ग़र समझने लगें,
रास्ते आएँगे, जो सही वो चुनो,

रानी : नाज़ तुझ पर है बेटी, सदा खुश रहे,
तूने मेरा भी सिर आज ऊँचा किया,

सोचती हूँ तो दिल में लहर उठ रही,
वो घड़ी, गोद तुझको जब हमने लिया,

राजा : *(पर्दे के पीछे से निकल कर आते हुए)*
मन में चिंता थी गहरी, मैं सोया नहीं,
मेरी बेटी मैं तेरा गुनहगार हूँ,
मैंने आँखों से देखा जो छिपकर यहाँ,
क्या बताऊँ मैं कितना शरमसार हूँ?
कल के दरबार में तू करे फैसला,
अब यही मेरे मन को समझ आ रहा,
मुझे तुझपे भरोसा अब पूरा हुआ,
होगा सच न्याय मुझको नज़र आ रहा,

(मंच पर अँधेरा फिर प्रकाश राजा के दरबार का दृश्य, राजकुमारी फैसला सुनाती है।)

राजकुमारी : चारो भाई हैं चतुर, सभी एक से एक,
चुनना मजबूरी हुई, उनमें कोई एक,
पाँचों हिस्से एक कर, तीन देव बनवाए,
पहले तीनों में उन्हें, तुरत देव बँटवाए,

मंत्री : ये कैसा है न्याय? कुमारी क्षमा करें,
भाई तो ये चार, कुमारी क्षमा करें?

राजकुमारी : मैंने देखा सब चतुर, मंत्री जी ये लोग,
लिया किस तरह फैसला, सुनें वही संयोग,
बाकी सबने सोच ली थी खाने की बात,
चौथे ने माँगी मुझे मिलने की सौगात,
मिलने की सौगात, प्रजा के सारे कष्ट गिनाए,
हो निदान उनका कैसे, ये भी उपाय बतलाए,
ऐसा जिसको खुद से ज्यादा चिंता प्रजाजनों की,
अगर बने राजा अपना तो धन्य होय ये धरती,
इसीलिए सब सोच समझ कर किया फैसला भारी,
सबसे छोटा हो मेरा पति, बने राज्य अधिकारी,
लेकर उम्मीदें बड़ी ये दूर देश से आये,
है ये मेरी नज़र में, चतुराई का न्याय,

राजा : मेरी बेटी तू सचमुच सयानी बड़ी,
जो कठिन था वो सब कुछ सरल कर दिया,
बोझ सीने पे ले कल गया था बड़ा,
अपनी बुद्धि से तूने तरल कर दिया,
कितना मुझको सुकून आज तूने दिया,
कीमिया से अमिय सब गरल कर दिया,
(दर्शकों की ओर देखते हुए)
आज के वक्त में योग्यता है कहाँ?
और है तो परख की कहाँ है कला?
पर अभी आप सबने जो देखा यहाँ,
क्यों हुआ है न बिलकुल सही फैसला !

(नौटंकी समाप्त होती है। सभी पात्र एक एक कर गाते हुए मंच पर प्रवेश करते हैं। पहला राहगीर मंच पर आता है।)

राहगीर एक : शक नकरता मैं कहीं अगर,
खेल फिर जाता वहीं बिगर,
मिल गई खोई जो औरत,
बस गई फिर से मेरी छत,
आपकी दुआ आपका प्यार,
सिर झुकाकर हमको स्वीकार,

राहगीर दो : *(पर्दे के पीछे से राजा की ओर हाथ जोड़कर कहता हुआ प्रवेश करता है।)*
राजाजी बड़ी करी दाया,
ऊँट को मैंने भी पाया,
मगर एक सबक भी है सीखा,
सच नहीं होता जो दीखा,
बुद्धि का खेल सबसे ऊपर,
बुद्धि ही राजा इस भू पर,

वाचक एक : *(दर्शकों को संबोधित करते हुए प्रवेश)*
कहो अब, कैसी लगी कहानी,
मिले गए नए राजा और रानी,
बुद्धि के दोनों हैं भंडार,
मिल रहा जिन्हें प्रजा का प्यार,

वाचक दोनों : मन में हम सबके हर्ष अपार,
हुई मेहनत सबकी साकार,
प्यार ऐसा जो पाएँगे, फिर नया खेल दिखाएँगे,

नौटंकी निर्देशक : अपनी मेहनत का हमको सिला मिल गया,
आपकी ये दुआएँ कबूल हैं हमें,
अच्छी बातें मिली हों तो, ले जाइए,
हो जो बेकार, स्वीकार भूलें हमें,
नौटंकी लेखक-लिखते पढ़ते मज़ा ले लिया था सभी,
अब ये जो भी मिला है वो सब ब्याज है,
अगली किश्तों में सारा, चुका दूँगा मैं,
कर्ज रख कर मरूँगा न, सब याद है,

नौटंकी लेखक- रजनीकान्त शुक्ल, के.ए. 363 सेक्टर-12, प्रतापविहार गाजियाबाद उ.प्र. 201009
फोन- 9868815635, 8700491087